[2021] 6 एस. सी. आर. 774

केरल राज्य

वी.

के. अजीत और ओआरएस।

(2021 की आपराधिक अपील संख्या 697)

28 जुलाई, 2021

[डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़ और

एम. आर. शाह, जे. जे.]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973:

एस. 321 - अभियोजन वापस लेना-प्रतिवादी-विधायक

कथित तौर पर अध्यक्ष के मंच पर चढ़कर बजट की प्रस्तुति को बाधित किया और फर्नीचर और वस्तुओं को नुकसान पहुंचाया जिससे भारी नुकसान हुआ-के इशारे पर आपराधिक मामला दर्ज किया गया

विधायी सचिव यू/एस एस। 447 और 427 आर/डब्ल्यू एस। 34 आई. पी. सी. और एस. 3 (1) सार्वजनिक संपत्ति क्षति निवारण अधिनियम, 1984-मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा संज्ञान लिया गया-सी. जे. एम.

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 के तहत अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत करना-लोक अभियोजक द्वारा मामले को वापस लेने की मंजूरी के लिए आवेदन धारा 321

प्रत्यर्थियों के खिलाफ-सीजेएम ने लोक अभियोजक को प्रत्यर्थियों के खिलाफ मुकदमा वापस लेने की अनुमति देने से इनकार कर दिया। 321 – उच्च न्यायालय ने आदेश को बरकरार रखा-अपील पर अभिनिर्धारित किया: विशेषाधिकार और उन्मुक्ति देश के सामान्य कानून से छूट का दावा करने के लिए प्रवेश द्वार नहीं हैं, विशेष रूप से आपराधिक कानून जो देश को नियंत्रित करता है।

प्रत्येक नागरिक की कार्रवाई-आपराधिक कानून के अनुप्रयोग से छूट का दावा करना उस विश्वास के साथ विश्वासघात करना होगा जो कानून के निर्माताओं और प्रवर्तकों के रूप में निर्वाचित प्रतिनिधियों पर प्रभावित होता है-वापस लेने का आवेदन कला में निहित संवैधानिक प्रावधानों की एक मौलिक गलत धारणा पर आधारित है। 194 – बजट की प्रस्तुति के खिलाफ अपना विरोध दर्ज कराने के लिए सदस्यों द्वारा सदन के भीतर सार्वजनिक संपत्ति को नष्ट करने के कथित कार्य को अपने विधायी कार्यों के प्रयोग के लिए आवश्यक नहीं माना जा सकता है, और न ही इसे विधायिका में बोलने की स्वतंत्रता के साथ जोड़ा जा सकता है, इस प्रकार, बजट के तहत गारंटीकृत विशेषाधिकारों के अंतर्गत नहीं आता है। संविधान-अभियोजन को वापस लेने की अनुमति देने से केवल यह पता चलेगा कि निर्वाचित प्रतिनिधियों को आपराधिक कानून के जनादेश से छूट है-इस प्रकार, सीजेएम और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को बरकरार रखा जाता है-सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान की रोकथाम अधिनियम, 1984।

774 केरल राज्य v. के. अजीत और ओआरएस।

एस. 321 - अभियोजन की वापसी लोक अभियोजक यू/एस द्वारा शक्ति का प्रयोग। 321 - प्रमुख द्वारा अधिकारिता का प्रयोग

न्यायिक मजिस्ट्रेट-सामान्य सिद्धांत-का निर्माण। एस. 321 – लोक अभियोजक यू/एस द्वारा वापस लेने के लिए आवेदन को अस्वीकार करने से संबंधित मामला। 321 मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट और उच्च न्यायालय द्वारा सीआरपीसी-याचिका कि वीडियो

घटना की रिकॉर्डिंग विधानसभा के इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड रूम से अध्यक्ष की अनुमति के बिना प्राप्त की गई थी; और यह कि वीडियो रिकॉर्डिंग में साक्ष्य की स्वीकार्यता के लिए आवश्यक प्रमाणन का अभाव है-आयोजितः साक्ष्य की स्वीकार्यता, अनुपस्थित प्रमाणन आदि के प्रश्नों का निर्णय विचारण के चरण के दौरान निचली अदालत द्वारा किया जाना है-यह इस अदालत का कर्तव्य नहीं है, एक आवेदन यू/एस में। 321 साक्ष्य संबंधी मुद्दों पर निर्णय लेना और जांच करना

साक्ष्य की स्वीकार्यता या पर्याप्तता-साक्ष्य अधिनियम, 1872-एस। 65 बी.

एस. 197 (1) – अभियुक्त-विधायक के विरुद्ध अभियोजन के लिए अध्यक्ष को मंजूरी-की आवश्यकता-आयोजितः अपराध के लिए विशिष्ट या वर्ग के लिए विशिष्ट आपराधिक अभियोजन शुरू करने के लिए अध्यक्ष की मंजूरी के लिए कोई प्रावधान नहीं है-इस प्रकार, तथ्यों पर, अभियुक्त के खिलाफ अभियोजन मंजूरी के अभाव में दूषित नहीं किया गया है।

भारत का संविधानः

कलाएँ। 105 और 194-संसद सदस्यों और एम. एल. ए. के विशेषाधिकार और उन्मुक्ति-व्याख्या-का दायरा-समझाया गया।

कला. 194 - विधान सभा और उसके सदस्यों और समितियों की शक्तियाँ, विशेषाधिकार, आदि

कार्यवाही-आयोजित सदन की कार्यवाही के प्रकाशन से उन्मुक्तिः संसदीय कार्यवाहियों में सदन के अंदर की सभी गतिविधियाँ शामिल नहीं हैं-यह केवल सदस्यों की भागीदारी और भागीदारी के लिए उनकी आधिकारिक क्षमता में आवश्यक कार्यों तक ही सीमित है। सदन में विचार-विमर्श-विनाश और बर्बरता का कार्य अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति नहीं है और इसे सभा की कार्यवाही नहीं कहा जा सकता है-इस प्रकार, घटना की वीडियो रिकॉर्डिंग।

यह विधानसभा की "कार्यवाही" नहीं थी, जिसे अनुच्छेद के तहत कानूनी कार्यवाही से संरक्षित किया जाएगा। 194 (2) .

कला. 136 - जनता द्वारा वापस लेने के लिए आवेदन को अस्वीकार करने से संबंधित मामले के तहत अधिकार क्षेत्र

अभियोजक यू/एस। 321 मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट और उच्च [2021] 6 एस. सी. आर. द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

न्यायालय-हस्तक्षेप-आयोजितः न्यायालय को इस तरह के मामले के तथ्यों और साक्ष्यों की बारी-बारी से जांच शुरू नहीं करनी चाहिए-जब निष्कर्ष स्पष्ट त्रुटि या विकृति से पीड़ित होते हैं तो हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है।

संसदीय विशेषाधिकारः यूनाइटेड किंगडम में हाउस ऑफ कॉमन्स के सदस्यों द्वारा प्राप्त विशेषाधिकारों और उन्मुक्ति की प्रकृति-विभिन्न चरणों के माध्यम से विकास

न्यायशास्त्रीय विकास-चर्चा की गई।

याचिकाओं को खारिज करते हुए अदालत ने

पकड़नाः 1. दंड संहिता की धारा 321 के तहत अभियोजन वापस लेने पर उभरने वाले सिद्धांत

प्रक्रिया, 1973 इस प्रकार हैः

(i) धारा 321 अभियोजन से पीछे हटने का निर्णय लोक अभियोजक को सौंपती है लेकिन अदालत की सहमति अभियोजन वापस लेने के लिए आवश्यक है;

((ii) लोक अभियोजक न केवल साक्ष्य की कमी के आधार पर बल्कि आगे भी अभियोजन से पीछे हट सकता है।

((iii) लोक अभियोजक को इस पद से हटने के लिए अदालत की सहमति लेने से पहले एक स्वतंत्र राय तैयार करनी चाहिए। अभियोजन पक्ष;

(iv) हालांकि केवल यह तथ्य कि सरकार की ओर से पहल की गई है, वापस लेने के लिए आवेदन को दूषित नहीं करेगा,

न्यायालय को वापस लेने के कारणों का पता लगाने का प्रयास करना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि लोक अभियोजक संतुष्ट था कि अभियोजन वापस लेना अच्छे और प्रासंगिक के लिए आवश्यक है।

कारण;

(v) यह तय करने में कि वापस लेने के लिए अपनी सहमति देनी है या नहीं, न्यायालय एक न्यायिक कार्य करता है लेकिन इसका वर्णन किया गया है।

प्रकृति में पर्यवेक्षक होना। यह तय करने से पहले कि अपनी सहमति देनी है या नहीं, अदालत को संतुष्ट होना चाहिए किः

(क) लोक अभियोजक के कार्य का अनुचित तरीके से प्रयोग नहीं किया गया है या यह कि यह अवैध कारणों या उद्देश्यों के लिए न्याय के सामान्य पाठ्यक्रम में हस्तक्षेप करने का प्रयास नहीं है; केरल राज्य v.

के. अजीत और ओआरएस।

(ख) आवेदन सार्वजनिक नीति और न्याय के हित में सद्भावना से किया गया है, न कि कानून की प्रक्रिया को विफल करने या रोकने के लिए;

(ग) आवेदन ऐसी अनियमितताओं या अवैधताओं से ग्रस्त नहीं है जो स्पष्ट अन्याय का कारण बन सकता है यदि सहमति दी गई थी।

दिया जाता है;

(घ) सहमति का अनुदान उप-प्रशासन की सेवा करता है

न्याय; और

(ई) अनुमति किसी ऐसे गुप्त उद्देश्य के साथ नहीं मांगी गई है जिसका कानून के समर्थन से कोई संबंध नहीं है। लोक अभियोजक को बनाए रखना कर्तव्य है;

(vi) यह निर्धारित करते समय कि क्या अभियोजन की वापसी न्याय के प्रशासन के अधीन है, न्यायालय

अपराध की प्रकृति और गंभीरता और सार्वजनिक जीवन पर इसके प्रभाव की जांच करने में न्यायसंगत होगा, विशेष रूप से जहां सार्वजनिक धन और सार्वजनिक न्यास के निर्वहन से जुड़े मामले शामिल हैं; और

(vii) ऐसी स्थिति में जहां विचारण न्यायाधीश और पुनरीक्षण न्यायालय दोनों ने सहमति देने या अस्वीकार करने में सहमति व्यक्त की है,

यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए समवर्ती निष्कर्षों को परेशान करने से पहले सावधानी बरतेंगे। न्यायालय इस अधिकारिता के प्रयोग से जुड़े सुव्यवस्थित सिद्धांतों का प्रयोग करते हुए ऐसे मामले में हस्तक्षेप कर सकता है जहां विचारण न्यायाधीश या उच्च न्यायालय यह तय करने में सही सिद्धांतों को लागू करने में विफल रहा है कि क्या

सहमति दें या रोकें। [पैरा 23] [811-ई-एच; 812-ए-एच]

शीओनानंदन पासवान बनाम बिहार राज्य और अन्य। (1987) 1

एस. सी. सी. 288 [1987] 1 एस. सी. आर. 702-इसके बाद आया।

बिहार राज्य बनाम राम नरेश पांडे और अन्न। आकाशवाणी 1957 एससी 389: [1957] एस. सी. आर. 279; एम. एन. शंकरनारायणन नायर बनाम पी. वी. बालकृष्णन (1972) 1 एस. सी. सी. 318: [1972] 2 एस. सी. आर. 599; राजेंद्र कुमार जैन बनाम विशेष के माध्यम से राज्य

पुलिस प्रतिष्ठान और अन्य। (1980) 3 एससीसी 435: [1980] 3 एससीआर 982; येरनेनी राजा रामचंदर बनाम राज्य [2021] 6 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

आंध्र प्रदेश और अन्य। (2009) 15 एससीसी 604: [2009] 12 एस. सी. आर. 494; बैराम मुरलीधर बनाम आंध्र राज्य

प्रदेश (2014) 10 एस. सी. सी. 380: [2014] 8 एससीआर 328

संदर्भित किया गया।

-

2.1 संविधान के अनुच्छेद 105 और 194 में सदस्यों के विशेषाधिकारों और उन्मुक्ति के लिए समान रूप से प्रावधान किया गया है।

क्रमशः संसद और विधायक। [पैरा 24] [813-ए-बी]

2.2 अनुच्छेद 194 का खंड 1 प्रत्येक राज्य के विधानमंडल में बोलने की स्वतंत्रता को मान्यता देता है। हालाँकि, स्वतंत्रता को मान्यता दी गई

खंड 1 द्वारा संविधान के प्रावधानों और राज्य विधानमंडलों की प्रक्रिया को विनियमित करने वाले स्थायी आदेशों के अधीन है। खंड 2 प्रतिरक्षा के एक नियम का प्रतिपादन करता है जो एक सदस्य की रक्षा करता है। विधायिका में या विधायिका की किसी समिति में "किसी भी बात के संबंध में या दिए गए वोट के संबंध में" किसी भी न्यायालय में कार्यवाही से विधायिका की। इसके अलावा यह एक ढाल प्रदान करता है।

विशेषाधिकार और उन्मुक्ति कानून द्वारा परिभाषित हैं। जब तक कानून द्वारा परिभाषित नहीं किया जाता है-इस विषय पर वर्तमान में कोई कानून नहीं है-सदन और इसकी समितियों के सदस्यों के विशेषाधिकार और उन्मुक्ति ऐसी होंगी जो संविधान के 44 वें संशोधन की धारा 26 के लागू होने से पहले मौजूद थीं। खंड 4 के अनुसार, विशेषाधिकार और उन्मुक्ति उन लोगों से भी जुड़ी हैं जिन्हें बोलने और कार्यवाही में भाग लेने का अधिकार है। सदन या उसकी समितियाँ। [पैरा 25] [813-जी-एच; 814-ए-सी]

2.3 संविधान को अपनाने के समय, अनुच्छेद 194 के खंड 3 में प्रावधान किया गया था कि विशेषाधिकार, उन्मुक्ति और शक्तियाँ

किसी राज्य के विधानमंडल के सदन (और उसके सदस्यों और समितियों) के सदस्य ऐसे होंगे जिन्हें समय-समय पर विधानमंडल द्वारा कानून द्वारा परिभाषित किया जा सके और जब तक इस प्रकार परिभाषित नहीं किया जाता है, तब तक वे संविधान के प्रारंभ में यूनाइटेड किंगडम की संसद के हाउस ऑफ कॉमन्स के सदस्य होंगे। संविधान के बयालीसवें संशोधन की धारा 34 द्वारा, अनुच्छेद 194 के खंड (3) में संशोधन किया गया और एक अस्थायी प्रावधान को मूर्त रूप दिया गया जिसके तहत केरल राज्य की शक्तियों, विशेषाधिकारों और उन्मुक्ति तक v.

के. अजीत और ओआरएस।

किसी राज्य के विधानमंडल के सदन (और सदस्यों और समितियों के) को विधानमंडल द्वारा बनाए गए कानून द्वारा परिभाषित किया गया था, वे ब्रिटिश हाउस ऑफ कॉमन्स के होंगे और विशेषाधिकार होंगे।

प्रत्येक सदन का "ऐसा होगा जो समय-समय पर ऐसे सदन द्वारा विकसित किया जाए।" हालाँकि, संविधान (बयालीस) संशोधन अधिनियम 1976 की धारा 1 (2) के तहत अधिसूचना जारी करके धारा 34 को लागू नहीं किया गया था। अंततः, अपने वर्तमान रूप में खंड (3) को 20 जून 1979 से संविधान (चालीस-चौथा) संशोधन अधिनियम 1978 की धारा 26 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। खंड (3) की वर्तमान स्थिति यह है कि: राज्य विधानमंडल के किसी सदन और सदस्यों और समितियों की शक्तियों, विशेषाधिकारों और उन्मुक्तियों का अंतिम स्रोत एक विधान के माध्यम से निर्धारित किया जाएगा; जब तक कि ऐसा विधान लागू नहीं होता है। अधिनियमित, वह स्थिति जो चालीस-चौथा संशोधन अधिनियम 1978 की धारा 26 के लागू होने से तुरंत पहले थी, शासन करेगी; और विधानमंडल के सदन द्वारा विशेषाधिकारों और उन्मुक्तियों के विकास की अवधारणा को लागू करने वाला संविधान में संशोधन कभी भी लागू नहीं हुआ और अब हटा दिया गया है। चूंकि संसद ने अभी तक संसदीय विशेषाधिकारों के विषय पर कोई कानून नहीं बनाया है, इसलिए संविधान के अनुच्छेद 194 (3) के अनुसार

संविधान का निर्माण। [पैरा 26,29] [814-सी-जी; 817-सी] 2.4 यह स्पष्ट है कि सदन की सीमा के भीतर आपराधिक अपराध करने वाला व्यक्ति पूर्ण अपराध नहीं मानता है।

विशेषाधिकार। इसके बजाय, उसके पास एक योग्य विशेषाधिकार होगा, और उसे केवल तभी प्रतिरक्षा प्राप्त होगी जब कार्रवाई सदन में सदस्य की प्रभावी भागीदारी के साथ संबंध रखती है। [पैरा 32] [819-एफ-जी]

आर बनाम एलियट, होल्स और वेलेंटाइन (1629) 3 सेंट ट्र 292 336; राजा राम पाल बनाम माननीय अध्यक्ष, लोकसभा (2007) 3 एस. सी. सी. 184: [2007] 1 एससीआर 317; ब्रैडलॉफ बनाम गोसेट [1884] ईडब्ल्यूएचसी 1 (क्यूबी); आर बनाम चेटर और अन्य

एर्स्किन मे, संसदीय अभ्यास, अध्याय 17, पृष्ठ 281 (24 वां संस्करण, लेक्सिस नेक्सिस, 2011); सर एडवर्ड

कोक, कानूनों के संस्थानों का चौथा भाग

इंग्लैंड 14 (1797)-संदर्भित।

21] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

3. जब भी अनुच्छेद 105 (3) या अनुच्छेद 194 (3) के संदर्भ में विशेषाधिकार या प्रतिरक्षा का दावा किया जाता है, तो न्यायालय को यह निर्धारित करने का अधिकार और अधिकार क्षेत्र सौंपा जाता है क्या दावा संवैधानिक प्रावधान के आधार पर टिकाऊ है। भारत में न तो संसद और न ही राज्य विधानसभाएं "स्व-संरचना या दूसरे शब्दों में अपने स्वयं के संविधान को विनियमित करने की शक्ति" का दावा कर सकती हैं।

हाउस ऑफ कॉमन्स या यूके में "। इसलिए यह निर्णय भारत में संवैधानिक सर्वोच्चता के सिद्धांत पर जोर देता है

यू. के. में संसदीय सर्वोच्चता से अलग। [पैरा 42] [824-जी-एच; 825-एबी]

राजा राम पाल बनाम माननीय अध्यक्ष, लोकसभा (2007) 3

एस. सी. सी. 184 [2007] 1 एस. सी. आर. 317-इसके बाद आया।

पी. वी. नरसिम्हा राव बनाम राज्य (सी. बी. आई./एस. पी. ई.) आदि ए. आई. आर 1998 एस. सी. 2120 [1998] 2 एस. सी. आर. 870; लोकायुक्ता, न्यायमूर्ति रिपुसूदन दयाल (सेवानिवृत्त) और अन्य। बनाम मध्य प्रदेश राज्य और अन्य। (2014) 4 एससीसी 473: [2014] 3 एससीआर 242

संदर्भित किया गया।

4. संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में कार्य तक पहुँचने में, न्यायालय को अच्छा करना चाहिए -

उस सावधानी को ध्यान में रखें जो शीओनानंदन पासवान के मामले में संविधान पीठ के फैसले में बहुमत के फैसले में व्यक्त की गई है। न्यायालय ने कहा कि यह "इस न्यायालय की घोषित नीति रही है कि इस तरह के मामले के तथ्यों और साक्ष्य की बारी-बारी से जांच शुरू नहीं की जाए", विशेष रूप से क्योंकि गुण या तथ्यों और साक्ष्य पर कोई भी अवलोकन मुकदमे में पक्षों के लिए गंभीर पूर्वाग्रह पैदा करेगा। इसलिए, वकील की प्रस्तुतियों तक पहुँचते समय, यह सावधानी और चेतावनी के साथ शुरू करना आवश्यक है कि उनका मूल्यांकन करते समय न्यायालय को अनुच्छेद 136 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र की सीमाओं को पार नहीं करना चाहिए। सीजेएम और उच्च न्यायालय दोनों इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि धारा 321 के तहत लोक अभियोजक द्वारा वापस लेने के लिए आवेदन की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। मुद्दा यह है कि क्या ये निष्कर्ष एक स्पष्ट त्रुटि या विकृति से पीड़ित हैं जो वारंट करेगा। इस न्यायालय का हस्तक्षेप। [पैरा 45] [823-बी-एफ]

शीओनानंदन पासवान बनाम बिहार राज्य और अन्य। (1987) 1

एस. सी. सी. 288 [1987] 1 एस. सी. आर. 702-इसके बाद आया।

केरल राज्य v. के. अजीत और ओआरएस।

5.1 सी. जे. एम. के निर्णय की पुष्टि करने के लिए उच्च न्यायालय के निष्कर्ष का कानून के चश्मे से विश्लेषण किया जाना चाहिए क्योंकि यह संविधान पीठ के फैसले से पहले और बाद में कई फैसलों में और निश्चित रूप से, शिवानंदन पासवान के मामले में निर्णय में लगातार स्पष्ट किया गया है। दूसरा पहलू जो ध्यान में रखा जाना चाहिए वह यह है कि उच्च न्यायालय ने इस तथ्य को स्वीकार कर लिया है कि वापस लेने के लिए आवेदन को किसी भी दुर्भावना के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है। यह विचार किया जाना चाहिए कि क्या यह एक ऐसी परिस्थिति है जिसके परिणामस्वरूप धारा 321 के तहत अभियोजन वापस लेने की अनुमति देने के लिए आवेदन को अनुमति दी जानी चाहिए थी। मामले के इस पहलू पर मुद्दा यह है कि क्या एक निष्कर्ष कि सद्भावना का कोई अभाव नहीं है, के परिणामस्वरूप धारा 321 के तहत एक आवेदन को अन्य विचारों से रहित रूप से अनुमति दी जानी चाहिए जो इस तरह के निर्णय को आधार बनाना चाहिए।

[पैरा 46] [827-ए-सी]

शीओनानंदन पासवान बनाम बिहार राज्य और अन्य। (1987) 1 एस. सी. सी. 288 [1987] 1 एस. सी. आर. 702-इसके बाद आया।

5.2 तत्काल मामले में प्राथमिकी में जिन व्यक्तियों को आरोपी के रूप में नामित किया गया है, वे एक जिम्मेदार निर्वाचित पद पर थे विधान सभा में विधायक। किसी भी अन्य नागरिक की तरह, वे आपराधिक कानून द्वारा निर्धारित वैध व्यवहार की सीमाओं के अधीन हैं। निर्वाचित विधायिका का कोई भी सदस्य आपराधिक कानून के प्रतिबंधों से ऊपर खड़े होने के लिए विशेषाधिकार या प्रतिरक्षा का दावा नहीं कर सकता है, जो सभी नागरिकों पर समान रूप से लागू होता है। सार्वजनिक संपत्ति क्षति निवारण अधिनियम 1984 का उद्देश्य और उद्देश्य दंगों और सार्वजनिक विरोध प्रदर्शनों के दौरान होने वाले विनाश और क्षति सहित (लेकिन इन्हीं तक सीमित नहीं) सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान और बर्बरता के कृत्यों पर अंकुश लगाना था। [पैरा 52] [831-ई-जी]

रीः सार्वजनिक और निजी संपत्तियों का विनाश 2009 5 एससीसी 212: [2009] 6 एससीआर 439; कोडुंगल्लूर फिल्म सोसाइटी और एक अन्य बनाम भारत संघ 2018 10 एससीसी

713 [2018] 12 एस. सी. आर. 695-संदर्भित।

5.3 विधायिका के एक सदस्य, विपक्ष में शामिल थे,

विधानमंडल के पटल पर विरोध करने का अधिकार है। ऐसा करने का अधिकार संसद में इसके अनुप्रयोग में अनुच्छेद 105 (1) और राज्य विधानमंडलों में इसके अनुप्रयोग में अनुच्छेद 194 (1) में निहित है।

21] 6 एस सी आर।

विधायिका की प्रक्रिया। दूसरा खंड विधायिका या किसी समिति में "कुछ भी कहा गया या कोई वोट दिया गया" के संबंध में "किसी भी अदालत में किसी भी कार्यवाही के लिए" दायित्व के खिलाफ प्रतिरक्षा प्रदान करता है। इसके अलावा, संसद या राज्य विधानमंडल के सदन द्वारा या उसके अधिकार के तहत किसी भी रिपोर्ट, पेपर, वोट या कार्यवाही के प्रकाशन के संबंध में कोई भी व्यक्ति उत्तरदायी नहीं होगा। अनुच्छेद 194 के खंड (3) का इतिहास, जैसा कि यह मूल रूप से था, जिसके तहत संसद और राज्य विधानमंडलों के सदस्यों की शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां थीं - जिन्हें संविधान के प्रवर्तन से तुरंत पहले हाउस ऑफ कॉमन्स के सदस्यों के लिए मान्यता दी गई थी। इस प्रावधान को 42 द्वारा संशोधित करने की मांग की गई थी।

संशोधन और अंततः चालीसवें संशोधन द्वारा संशोधित किया गया था, जिससे यह अपना वर्तमान रूप प्राप्त करता है। यह शक्तियों, विशेषाधिकारों और उन्मुक्तिओं को मान्यता देता है क्योंकि वे 44 वीं धारा की धारा 26 के प्रवर्तन से तुरंत पहले थे।

संशोधन। [पैरा 53] [831-जी-एच; 832-ए-डी]

5.4 हाउस ऑफ कॉमन्स के सदस्यों द्वारा प्राप्त विशेषाधिकारों और उन्मुक्ति के इतिहास का पता लगाते हुए, एर्स्किन मे

यू. के. में स्थिति का विभिन्न चरणों में सैद्धांतिक विभाजन करता है। तथापि, विशिष्ट विशेषता जो सदन के सदस्यों के विशेषाधिकारों और उन्मुक्ति से उभरती है

कॉमन्स आपराधिक कानून के अनुप्रयोग से प्रतिरक्षा का अभाव है। [पैरा 54] [832-डी-एफ]

5.5 इस पद के लिए एक वैध तर्क है। निर्वाचित सदस्यों को विशेषाधिकार और उन्मुक्ति प्रदान करने का उद्देश्य

विधायिका उन्हें बिना किसी बाधा, भय या पक्षपात के अपने कार्यों को करने में सक्षम बनाती है। पद की शपथ जिसे संसद और राज्य विधानमंडल के सदस्यों को लेना होता है

उनसे अपेक्षा की जाती है कि (i) कानून द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्चा विश्वास और निष्ठा रखें; (ii) भारत की संप्रभुता और अखंडता को बनाए रखें; और (iii) केरल राज्य का ईमानदारी से निर्वहन करें।

के. अजीत और ओआरएस।

जिस कर्तव्य पर वे प्रवेश करने वाले हैं। यह एक ऐसा वातावरण बनाने के लिए है जिसमें वे अपने कार्य कर सकें और

अपने कर्तव्यों का स्वतंत्र रूप से निर्वहन करें कि संविधान विशेषाधिकारों और उन्मुक्ति को मान्यता देता है। ये विशेषाधिकार कार्यात्मक हैं - विधायक के कार्यों के निर्वहन से संबंध। वे दर्जे की निशानी नहीं हैं जो विधायकों को असमान आधार पर खड़ा करती हैं। यह महत्वपूर्ण है कि यद्यपि अनुच्छेद 19 (1) (ए) अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार को स्पष्ट रूप से मान्यता देता है और

प्रत्येक नागरिक में विरासत में मिली अभिव्यक्ति, अनुच्छेद 105 (1) और 194 (1) दोनों इस बात पर जोर देते हैं कि संसद और राज्य के विधानमंडल में "बोलने की स्वतंत्रता होगी"। संक्षेप में, अनुच्छेद 19 (1) (ए) सभी नागरिकों में निहित भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के व्यक्तिगत अधिकार को मान्यता देता है। अनुच्छेद 105 (1) और 194 (1) संसद और राज्य में बोलने की स्वतंत्रता की बात करते हैं। विधायिकाओं और उस संदर्भ में आवश्यक रूप से एक ऐसे वातावरण के निर्माण को शामिल किया जाना चाहिए जिसमें उनके दायरे में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का प्रयोग किया जा सके। यह मान्यता कि संसद और राज्य विधानमंडलों में बोलने की स्वतंत्रता होगी, उन स्थितियों के अस्तित्व को सुनिश्चित करने की आवश्यकता को रेखांकित करती है जिनमें निर्वाचित प्रतिनिधि अपने कर्तव्यों और कार्यों को प्रभावी ढंग से कर सकते हैं।

वे कर्तव्य और कार्य उतने ही कर्तव्य और विश्वास का विषय हैं जितना कि वे उन प्रतिनिधियों में विरासत में प्राप्त अधिकार के हैं जो हैं जनता द्वारा चुना गया। [पैरा 55] [832-एफ-एच; 833-ए-डी]

आर बनाम एलियट, होल्स और वेलेंटाइन (1629) 3 सेंट ट्र 292 336; ब्रैडलॉफ बनाम गोसेट [1884] ईडब्ल्यूएचसी 1 (क्यूबी); आर बनाम चेटर और अन्य [2010] यूकेएससी 52-संदर्भित।

5.6 विशेषाधिकार और उन्मुक्ति देश के सामान्य कानून से छूट का दावा करने के लिए प्रवेश द्वार नहीं हैं, विशेष रूप से इस मामले में, आपराधिक कानून जो प्रत्येक नागरिक की कार्रवाई को नियंत्रित करता है। आपराधिक कानून के अनुप्रयोग से छूट का दावा करना उस विश्वास के साथ विश्वासघात करना होगा जो कानून के निर्माताओं और प्रवर्तकों के रूप में निर्वाचित प्रतिनिधियों के चरित्र पर प्रभावित होता है। जिस आधार पर लोक अभियोजक द्वारा धारा 321 के तहत वापसी के लिए आवेदन दायर किया गया था, वह अनुच्छेद 194 में निहित संवैधानिक प्रावधानों की एक मौलिक गलत धारणा पर आधारित है। ऐसा लगता है कि लोक अभियोजक विशेषाधिकारों और [2021] 6 एस. सी. आर. के अस्तित्व से प्रभावित थे।

एक गलत धारणा पर आगे बढ़ता है कि सदस्यों को चुना जाता है विधायिका आपराधिक कानून के सामान्य अनुप्रयोग से ऊपर है। [पैरा 56] [833-डी-जी]

5.7 पी. वी. नरसिम्हा राव के मामले पर निर्भरता का तर्क है कि

सदन के अंदर प्रतिवादी-अभियुक्त की कार्रवाई 'विरोध' का एक रूप था जो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ एक करीबी संबंध रखता है, और इस प्रकार, अनुच्छेद 194 (2) के तहत असंतोषजनक है। पी. वी. नरसिम्हा राव के मामले में बहुमत ने 'के संबंध में' वाक्यांश की व्याख्या से निपटा और इसे व्यापक महत्व दिया। साथ ही, बहुमत ने कहा कि अधिनियम या घटना (जो उस मामले में अविश्वास प्रस्ताव पर डाले गए मतों के संदर्भ में रिश्वतखोरी का कार्य था) और भाषण या मतदान की स्वतंत्रता के बीच एक सांठगांठ होनी चाहिए, जो अनुच्छेद 105 (2) के तहत संरक्षित स्वतंत्रता के साथ एक करीबी संबंध रखती है। हालाँकि, यह मामला सदन के सदस्यों को प्रदान किए गए 'बोलने की स्वतंत्रता' के विशेषाधिकार के दायरे से संबंधित नहीं था। यह लोकायुक्ता, न्यायमूर्ति रिपुसुदन दयाल (सेवानिवृत्त) के मामले में था कि इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने

विशेषाधिकारों की सामग्री की पहचान। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि सदस्यों को केवल ऐसे विशेषाधिकार प्राप्त होंगे जो उनके विधायी कार्यों को करने के लिए आवश्यक हैं। बजट पेश किए जाने के खिलाफ अपना विरोध दर्ज कराने के लिए सदस्यों द्वारा सदन के भीतर सार्वजनिक संपत्ति को नष्ट करने के कथित कार्य को अपने विधायी कार्यों को करने के लिए आवश्यक नहीं माना जा सकता है। सदस्यों के कार्य संवैधानिक साधनों की सीमा को पार कर गए हैं और इस प्रकार संविधान के तहत गारंटीकृत विशेषाधिकारों के दायरे में नहीं आते हैं। [पैरा 57] [833-जी-एच; 834-ए-डी]

पी. वी. नरसिम्हा राव बनाम राज्य (सी. बी. आई./एस. पी. ई.) आदि ए. आई. आर. 1998 एस. सी. 2120 [1998] 2 एस. सी. आर. 870; लोकायुक्ता, न्यायमूर्ति रिपुसूदन दयाल (सेवानिवृत्त) और अन्य। बनाम मध्य प्रदेश राज्य और अन्य। (2014) 4 एससीसी 473: [2014] 3 एससीआर 242

- संदर्भित किया गया।

5.8 धारा 321 के तहत आवेदन दायर किए जाने पर न्यायालय का वास्तविक कार्य यह सुनिश्चित करना है कि केरल राज्य का कार्यकारी कार्य v.

के. अजीत और ओआरएस।

स्वतंत्र रूप से और यह सुनिश्चित करें कि उन्होंने अपने दिमाग को आवश्यक उद्देश्य के लिए लागू किया है जो शक्तियों के प्रयोग को नियंत्रित करता है। क्या लोक अभियोजक ने नेक इरादे से काम किया है, यह अपने आप में इस मुद्दे के बारे में नहीं है कि क्या सहमति होनी चाहिए दिया गया। अदालत को इस बात की जांच करनी चाहिए कि क्या आवेदन सद्भावना से, सार्वजनिक नीति और न्याय के हित में किया गया है और न कि कानून की प्रक्रिया को विफल करने या दबाने के लिए। सद्भावना एक है और एकमात्र विचार नहीं है। अदालत को यह भी जांचना चाहिए कि क्या

आवेदन इस तरह की अनियमितताओं या अवैधताओं से ग्रस्त है जो सहमति दिए जाने पर प्रकट अन्याय का कारण बनता है। [पैरा 58] [834-डी-एच]

शीओनानंदन पासवान बनाम बिहार राज्य और अन्य। (1987) 1

एस. सी. सी. 288 [1987] 1 एस. सी. आर. 702-इसके बाद आया।

बिहार राज्य बनाम राम नरेश पांडे और अन्न। ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 389 [1957] एस. सी. आर. 279-पर निर्भर था।

5.9 इन सिद्धांतों की कसौटी पर, इस बात में कोई संदेह नहीं हो सकता है कि सीजेएम ने सहमति देने से इनकार कर दिया था

धारा 321 के तहत अभियोजन वापस लेने के लिए। जिन कृत्यों की शिकायत आई. पी. सी. की धारा 425,427 और 447 के तहत और सार्वजनिक संपत्ति क्षति निवारण अधिनियम 1984 की धारा 3 (1) के तहत दंडनीय अपराध होने का आरोप है, उन्हें राज्य विधानमंडल के पटल पर तत्काल मामले में किया गया है। सार्वजनिक संपत्ति के विनाश के कृत्यों को किसी भी स्वतंत्रता के साथ नहीं जोड़ा जा सकता है

विधायिका में या विपक्ष के सदस्यों के लिए वैध रूप से उपलब्ध विरोध के रूपों के साथ भाषण। इन आरोपों के बावजूद अभियोजन को वापस लेने की अनुमति देने के लिए, जिसके संबंध में जांच के बाद सीआरपीसी की धारा 173 के तहत एक अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की गई है और संज्ञान लिया गया है।

लिया गया, अवैध कारणों से न्याय के सामान्य पाठ्यक्रम में हस्तक्षेप के बराबर होगा। इस तरह की कार्रवाई स्पष्ट रूप से [2021] 6 एस. सी. आर है।

यह उस कानून की पुष्टि के लिए अप्रासंगिक है जिसके लिए कार्यपालिका के सभी अंग बाध्य हैं। इसलिए, उच्च न्यायालय का केवल यह निष्कर्ष कि सद्भावना का कोई अभाव नहीं है, सार्वजनिक न्याय के कारण और सार्वजनिक जीवन में ईमानदारी का पालन करने की आवश्यकता की अनदेखी करके आवेदन को एक आवश्यक परिणाम के रूप में अनुमति देने का परिणाम नहीं होगा। निर्वाचित प्रतिनिधियों के रूप में राज्य विधानमंडल के सदस्यों के चरित्र में एक सार्वजनिक विश्वास होता है जो इन पर प्रभावित होता है -

अपने कर्तव्यों का निर्वहन करना। अभियोजन को वापस लेने की अनुमति देने से केवल एक ही परिणाम मिलेगा, जो यह है कि निर्वाचित प्रतिनिधियों को आपराधिक कानून के जनादेश से छूट दी गई है। इसे सार्वजनिक न्याय के व्यापक उद्देश्यों की सहायता के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। [पैरा 59] [835-ए-ई]

6. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (1) में कहा गया है कि किसी लोक सेवक द्वारा कथित रूप से किए गए अपराध के लिए संज्ञान नहीं लिया जा सकता है। जो सरकार की मंजूरी से हटाने योग्य है, जब तक कि सरकार की मंजूरी प्राप्त न हो जाए। सी. आर. पी. सी. की धारा 197 का एक सादा पाठ स्पष्ट करता है कि यह केवल तभी लागू होता है जब जनता

नौकर को सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी से पद से हटाया जा सकता है। हालाँकि, विधायकों को सरकार की मंजूरी से नहीं हटाया जा सकता है, क्योंकि वे भारत के लोगों के निर्वाचित प्रतिनिधि हैं। उदाहरण के लिए उन्हें पद से हटाया जा सकता है, जब उन्हें संविधान की दसवीं अनुसूची के तहत अयोग्य ठहराया जाता है, जिसके लिए सरकार की मंजूरी की आवश्यकता नहीं होती है। इसके अलावा, धारा 197 के तहत मंजूरी की आवश्यकता केवल अदालत द्वारा संज्ञान लेने से पहले होती है, न कि अभियोजन शुरू करने के लिए। यह निवेदन कि प्रतिवादी-अभियुक्त के खिलाफ अभियोजन अध्यक्ष की मंजूरी के अभाव में दूषित किया जाता है, खारिज कर दिया जाता है।

[पैरा 63-65] [838-F-G; 839-B-C; 840-E-F]

पी. वी. नरसिम्हा राव बनाम राज्य (सी. बी. आई./एस. पी. ई.) आदि ए. आई. आर. 1998 एस. सी. 2120 [1998] 2 एस. सी. आर. 870; के. वीरास्वामी बनाम भारत संघ (1991) 3 एससीसी 655: [1991] 3 एससीआर 189; सतीश चंद्र बनाम अध्यक्ष, लोकसभा (2014) 2 एससीसी 178; रामदास अठावले (5) बनाम भारत संघ (2010) 4 एससीसी 1: [2010] 3 एस. सी. आर. 1059; सीलोन के महान्यायवादी बनाम डी लिवर [1963] एसी 103-संदर्भित।

7.1 अनुच्छेद 194 (2) को दो अंगों में विभाजित किया गया है। अनुच्छेद 194 (2) का पहला अंग जो सदस्यों को पूर्ण प्रतिरक्षा प्रदान करता है।

के. अजीत और ओआरएस।

सदन में कही गई किसी भी बात या दिए गए किसी भी वोट के संबंध में अनुच्छेद 194 (1) के तहत प्रदान की गई अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति है। अनुच्छेद 194 (2) का दूसरा अंग सदस्यों को सदन द्वारा या उसके अधिकार के तहत 'किसी भी रिपोर्ट, पेपर, वोट या कार्यवाही' के प्रकाशन के संबंध में प्रतिरक्षा प्रदान करता है। पहले अंग में 'कुछ भी कहा गया या कोई वोट दिया गया' के लिए कानूनी प्रतिरक्षा और

अनुच्छेद 194 (2) के दूसरे अंग में 'रिपोर्ट, पेपर, वोट या कार्यवाही का प्रकाशन', अनुच्छेद 194 (1) के तहत प्रदान की गई अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से प्रवाहित होता है। अनुच्छेद 194 (2) में दी गई अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की इन अभिव्यक्तियों के प्रयोग को व्यक्त प्रतिरक्षा प्रदान की गई है। हालाँकि, अनुच्छेद 194 (2) के दो अंगों के बीच एकमात्र अंतर यह है कि पहला अंग स्वतंत्रता के अभ्यास की रक्षा करता है, और दूसरा अंग सदस्य को स्वतंत्रता के उक्त अभ्यास के प्रकाशन से बचाता है। के खिलाफ कानूनी कार्यवाही स्वतंत्रता का प्रयोग केवल उन्हीं लोगों द्वारा शुरू किया जा सकता है जो स्वतंत्रता के प्रयोग के बारे में जानते हैं, जिसका अर्थ होगा कि या तो वे जो सदन में मौजूद हैं या जो भाषण, वोट या इसी तरह के प्रकाशित होने पर इसके बारे में जानते हैं। जबकि दोनों अंगों द्वारा संरक्षित स्वतंत्रताएं मूल रूप से समान हैं, दूसरा अंग इस अर्थ में स्पष्ट है कि यह किसी भी व्यक्ति को सदन के अंदर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के प्रयोग के खिलाफ कार्यवाही शुरू करने से रोकता है जब वे एक प्रकाशन के माध्यम से उक्त स्वतंत्रता के प्रयोग का ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस प्रकार, अभिव्यक्तियों के अभ्यास के लिए प्रदान की गई प्रतिरक्षा

अनुच्छेद 194 (2) के तहत दूसरे अंग में बोलने की स्वतंत्रता पहले अंग में प्रदान की गई अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से अधिक नहीं हो सकती है।

अनुच्छेद 194 (2)। कि सार्वजनिक संपत्ति के विनाश के कार्य हैं अनुच्छेद 194 (2) के पहले अंग के तहत विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है। नतीजतन, बर्बरता के कृत्यों को अभिव्यक्ति नहीं कहा जा सकता है

बोलने की स्वतंत्रता और विधानसभा की "कार्यवाही" कहल जाए। यह मसौदों का इरादा नहीं था

संविधान 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' की व्याख्या का विस्तार करेगा ताकि आपराधिक कृत्यों को विरोध के पर्दे के नीचे रखा जा सके। इसलिए, संविधान सदस्यों को केवल बोलने की स्वतंत्रता प्रदान करता है जो अभियोजन के किसी भी डर के बिना सार्थक विचार-विमर्श में उनकी सक्रिय भागीदारी के लिए आवश्यक है। [पैरा 80] [848-ए-जी] [2021] 6 एस. सी. आर.

7.2 इसके अलावा, अनुच्छेद 194 (2) में 'कार्यवाही' शब्द 'कोई भी रिपोर्ट, कागज, वोट' शब्दों का अनुसरण करता है। रिपोर्ट, कागजात और वोट वे कार्य हैं जो सदस्यों द्वारा किए जाते हैं

सदन में भागीदारी और विचार-विमर्श के लिए अपनी आधिकारिक क्षमता में सभा। ये आवश्यक कार्य हैं जो एक सदस्य को अपने निर्वाचित प्रतिनिधि के रूप में जनता के प्रति अपने कर्तव्य का निर्वहन करने के लिए करने होते हैं। एक समाज के व्याख्यात्मक सिद्धांत के अनुप्रयोग पर, वाक्यांश 'कार्यवाही' इसके आसपास के शब्दों से रंग लेता है। चूँकि वाक्यांश 'कार्यवाही' से जुड़े शब्द उन कार्यों को संदर्भित करते हैं जिनका प्रयोग किया जाता है सदस्यों को अपनी आधिकारिक क्षमता में, अपने आधिकारिक कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए, 'कार्यवाही' शब्द का अर्थ भी केवल ऐसी कार्रवाइयों को शामिल करने तक ही सीमित होना चाहिए। अपीलार्थी की दलीलों को खारिज कर दिया जाता है और यह माना जाता है कि घटना की वीडियो रिकॉर्डिंग विधानसभा की "कार्यवाही" नहीं थी, जिसे अनुच्छेद 194 (2) के तहत कानूनी कार्यवाही से संरक्षित किया जाएगा।

[पारस 81,82] [848-जी-एच; 849-ए-सी]

पी. वी. नरसिम्हा राव बनाम राज्य (सी. बी. आई./एस. पी. ई.) आदि ए. आई. आर. 1998

एससी 2120: [1998] 2 एस. सी. आर. 870-संदर्भित।

आर बनाम चैटर और अन्य [2010] यूकेएससी 52; अटॉर्नी

सीलोन के जनरल बनाम डी लिवर [1963] एसी 103

- संदर्भित किया गया।

7.3 प्रस्तुतिकरण कि वीडियो रिकॉर्डिंग नहीं थी

अध्यक्ष की मंजूरी से जांच अधिकारियों द्वारा प्राप्त; कि वीडियो रिकॉर्डिंग विधानसभा के इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड कक्ष की है और सदन के संरक्षक के रूप में, इस वीडियो रिकॉर्डिंग तक पहुंचने के लिए अध्यक्ष की अनुमति आवश्यक है; और यह कि वीडियो रिकॉर्डिंग में साक्ष्य की स्वीकार्यता के लिए आवश्यक प्रमाणन का अभाव है, प्रासंगिक नहीं है और इस न्यायालय द्वारा एक आवेदन में विचार के योग्य नहीं है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 के तहत अभियोजन वापस लेना। उच्च न्यायालय ने सही ढंग से कहा है कि साक्ष्य की अपर्याप्तता, साक्ष्य की स्वीकार्यता अनुपस्थित प्रमाणन आदि के प्रश्नों पर विचारण के चरण के दौरान निचली अदालत द्वारा निर्णय लिया जाना है। इस न्यायालय का यह कर्तव्य नहीं है कि वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 के तहत एक आवेदन में साक्ष्य संबंधी मुद्दों पर निर्णय ले और साक्ष्य की स्वीकार्यता या पर्याप्तता की जांच करे। [पैरास 83,84] [849-डी-एफ] द स्टेट ऑफ केराला बनाम।

के. अजीत और ओआरएस।

शीओनानंदन पासवान बनाम बिहार राज्य और अन्य। (1987) 1

एस. सी. सी. 288 [1987] 1 एस. सी. आर. 702-इसके बाद आया।

मामला कानून संदर्भ

[1980] 3 एससीआर 982

पैरा 9

(i)

संदर्भित किया गया है

[1972] 2 एससीआर 599

संदर्भित किया गया है

पैरा

15

[1980] 3 एससीआर 982

संदर्भित किया गया है

पैरा

16

[1987] 1 एससीआर 702

पैरा

17,45,

पीछा किया।

46 ,

58 , 84

[2009] 12 एससीआर 494

संदर्भित किया गया है

पैरा

21

[2014] 8 एससीआर 328

पैरा

22

संदर्भित किया गया है

[1998] 2 एससीआर 870

पैरा

33,57

संदर्भित किया गया है

[2007] 1 एससीआर 317

संदर्भित किया गया है

पैरा

41

[2014] 3 एससीआर 242

पैरा

43,55,57

संदर्भित किया गया है

[2009] 6 एससीआर 439

संदर्भित किया गया है

पैरा

50

[2018] 12 एससीआर 695

संदर्भित किया गया है

पैरा

50

[1957] एससीआर 279

उस पर भरोसा करें

पैरा

58

[1991] 3 एससीआर 189

संदर्भित किया गया है

पैरा

62

(2014) 2 एससीसी 178

संदर्भित किया गया है

पैरा

65

[2010] 3 एससीआर 1059

संदर्भित किया गया है

पैरा

65

आपराधिक अपील न्यायनिर्णयः आपराधिक अपील सं।

697 2021 का

उच्च न्यायालय के 12.03.2021 दिनांकित निर्णय और आदेश से

केरल के एर्नाकुलम में। 2020 की पुनरीक्षण याचिका No.641।

के साथ

2021 की आपराधिक अपील No.698

के. गोपालकृष्ण कुरुप, अधिवक्ता। जनरल, रंजीत कुमार, जयदीप गुप्ता,

श्री एड. , पी. नारायणन, मनु वी., जिष्णु एम. एल., जी. प्रकाश, राजगोपालन नायर, पी. एस. सुधीर, सुश्री ऐनी मैथ्यू, भरत सूद, सुश्री श्रुति जोस, अधिवक्ता। याचिकाकर्ता के लिए।

21] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

महेश जेठमलानी, वी. चितंबरेस, वरिष्ठ अधिवक्ता। , रवि शर्मा, शौमेंदु मुखर्जी, नचिकेता जोशी, सुश्री भारती त्यागी, मुकुल सिंह,

प्रणीत प्रणव, अमित शर्मा, भास्कर गौतम, सुश्री गुंजन मंगला, सुश्री मेघा शर्मा, आर. वी. श्रीजीत, सुविन आर. मेनन, सयुज मोहनदास, रमेश बाबू एम. आर., टी. आसफ अली, अधिवक्ता। उत्तरदाता के लिए।

डॉ. धनंजय वाई. चंद्रचूड़, जे. इस निर्णय को निम्नलिखित धाराओं में विभाजित किया गया है -

विश्लेषण को सुविधाजनक बनानाः

एक तथ्यात्मक पृष्ठभूमि

दलों की प्रस्तुतियाँ

बी.

मुद्दे और विश्लेषण

सी.

अभियोजन वापस लेना

सी. 1

एम. एल. एज़. की छूट और विशेषाधिकार

सी. 2

यूनाइटेड किंगडम में स्थिति

सी. 2.1

भारत में स्थिति

सी. 2.2

सार्वजनिक कार्य करने का विशेषाधिकार

सी. 3

विनाश-एक असंगत प्रस्ताव

अध्यक्ष की मंजूरी

सी. 4

विशेषाधिकार और अस्वीकृति का दावा करना

सी. 5

सबूत के रूप में वीडियो रिकॉर्डिंग कार्यवाहियों के प्रकाशन से छूट

सी. 5.1

द हाउस

वीडियो रिकॉर्डिंग की अस्वीकार्यता

सी. 5.2

सबूत

एक तथ्यात्मक पृष्ठभूमि

1. छुट्टी दे दी गई।

2. अपील केरल उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के 12 मार्च 2021 के फैसले से उत्पन्न होती है। उच्च न्यायालय में

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 397 के तहत अपने पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए 1 ने मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट 2, तिरुवनंतपुरम के आदेश को बरकरार रखा।

1 " सीआरपीसी "

2 " सी. जे. एम. "द स्टेट ऑफ केराला बनाम. के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

लोक अभियोजक दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 के तहत पहले से छठे उत्तरदाताओं के अभियोजन को वापस लेगा।

3. 13 मार्च 2015 को तत्कालीन वित्त मंत्री पेश कर रहे थे।

केरल विधान सभा में वित्तीय वर्ष 2015-2016 के लिए बजट। प्रतिवादी-अभियुक्त 3, जो उस समय विपक्ष में पार्टी से संबंधित विधानसभा के सदस्य थे, ने बजट की प्रस्तुति को बाधित किया, अध्यक्ष के मंच पर चढ़ गए और अध्यक्ष की कुर्सी, कंप्यूटर, माइक, आपातकालीन दीपक और इलेक्ट्रॉनिक पैनल सहित फर्नीचर और वस्तुओं को क्षतिग्रस्त कर दिया, जिससे रु।

4. 21 जुलाई 2018 को, सहायक लोक अभियोजक द्वारा सीआरपीसी की धारा 321 के तहत एक आवेदन दायर किया गया था जिसमें मंजूरी मांगी गई थी सभी प्रतिवादी-अभियुक्त के खिलाफ मामला वापस लें। अभियोजक ने अभियोजन वापस लेने के लिए निम्नलिखित कारण बताए:

प्रतिरक्षा और विशेषाधिकारः घटनाएँ एक के दौरान हुईं

(1)

विधानसभा का सत्र जब कुछ विधायकों ने बजट पेश करने का विरोध किया। विधायकों द्वारा 'विरोध' उन्मुक्ति और विशेषाधिकारों द्वारा संरक्षित है।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 194 (3) के तहत;

((ख)

विशेषाधिकार का उल्लंघनः अधिकारों और उन्मुक्ति का उल्लंघन

विधायकों को दिया जाना विशेषाधिकार का उल्लंघन है और विधानसभा को ऐसे कार्यों को दंडित करने का अधिकार है जो उसके अधिकार के खिलाफ और उसके वैध आदेशों की अवज्ञा के अपराध हैं। विशेषाधिकार का उल्लंघन सदन की अवमानना है, जो इसके अनन्य अधिकार क्षेत्र में आता है -

विधानसभा का अध्यक्ष;

3 "प्रतिवादी-अभियुक्त" शब्द 2021 की एस. एल. पी. (सी. आर. एल.) संख्या 4009 में प्रतिवादी संख्या 1 से 6 और 2021 की एस. एल. पी. (सी. आर. एल.) संख्या 4481 में याचिकाकर्ताओं को संदर्भित करता है।

62018 का सी. सी. सं. 151। 7 सीआरएल। 2019 का एमपी 2577।

सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

(iii)

अध्यक्ष की मंजूरीः एक अपराध जो किया जाता है

विधानसभा, सत्र के दौरान या उसके आसपास के क्षेत्रों में विधायकों द्वारा, अध्यक्ष की अनुमति के बिना पुलिस द्वारा पंजीकृत नहीं की जा सकती है। पुलिस अधिकारियों को कानून के उल्लंघन की जांच करने के लिए 'सक्षम प्राधिकारी' से प्राधिकरण की आवश्यकता होती है यदि यह विधान सभा के परिसर में होता है;

((iv) जनहितः विधायिकाओं को दी गई स्वतंत्रताएं लोकतंत्र के कामकाज के लिए आवश्यक हैं और अध्यक्ष या आपराधिक अदालतों की शक्तियों के अधीन हैं।

अध्यक्ष की मंजूरी। अध्यक्ष की मंजूरी के अभाव में विधायकों के मुकदमे का जारी रहना नागरिकों के बीच विधानसभा की गरिमा को कम करता है, जिससे प्रभावित होता है। लोक हित;

(v)

पुरुषों की अनुपस्थितिः आरोप पत्र के अनुसार, यह घटना बजट पेश किए जाने के खिलाफ विपक्ष में पार्टी के विरोध प्रदर्शन के दौरान हुई। इस प्रकार, अपराध के 'कारण' का आकलन करना मुश्किल है।

(vi)

सबूतों की कमीः गवाहों के बयान के तहत

सी. आर. पी. सी. की धारा 161 अस्पष्ट है और इसमें शामिल व्यक्तियों की उचित पहचान और कथित अपराध में उनकी भागीदारी का अभाव है। द.

जाँच अधिकारी अध्यक्ष की अनुमति के बावजूद स्वाभाविक चश्मदीद गवाहों, यानी विधानसभा कक्ष में मौजूद विधायकों के बयान दर्ज करने में विफल रहे हैं। हालाँकि इससे की गई जाँच की प्रकृति पर संदेह पैदा होता है, फिर भी यह इंगित करता है कि अभियोजन पक्ष ने

अपने मामले को साबित करने का एक दूरस्थ मौका;

(vii) घटना की वीडियो रिकॉर्डिंग की एक प्रति प्राप्त की गई थी।

विधानसभा, अध्यक्ष की मंजूरी के बिना। वीडियो फुटेज में भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 की धारा 65 बी के तहत प्रमाणन और इस साक्ष्य की स्वीकार्यता का अभाव है। मुकदमे में चुनौती दी जाएगी; और

(viii) केरल सरकार, जिसके पास नष्ट की गई संपत्ति का स्वामित्व था, ने 9 फरवरी 2018 के एक आदेश द्वारा अभियोजन वापस लेने के लिए सहमति व्यक्त की थी और इसलिए, 'व्यापक सार्वजनिक हित' को पूरा किया जाएगा यदि मामला

जल्दी वापस ले लिया।

केरल राज्य v. के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

5. मामला सीजेएम की अदालत में स्थानांतरित कर दिया गया था,

तिरुवनंतपुरम। 22 सितंबर 2020 के एक आदेश द्वारा, सीजेएम ने निम्नलिखित कारणों से अभियोजक के आवेदन पर सहमति देने से इनकार कर दियाः

विधायक केवल मुफ्त में ही प्रतिरक्षा का दावा कर सकते हैं।

((i)

पी. वी. नरसिम्हा राव बनाम राज्य (सी. बी. आई./एस. पी. ई.) आदि में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के अनुसार भाषण और मतदान। कथित अपराध

प्रत्यर्थी द्वारा किया गया-अभियुक्त के पास कोई नहीं था

उनके भाषण या वोट के साथ संबंध;

((ख)

इस मामले में विधायकों के खिलाफ मामला दर्ज किया गया था

विधान सभा के सचिव की और इस प्रकार, यह माना जा सकता है कि यह विधानसभा अध्यक्ष की जानकारी में था। तदनुसार, यह तर्क कि मामला की अनुमति के बिना दर्ज किया गया था

स्पीकर जमीन नहीं रखता है;

(iii)

हालाँकि केरल सरकार ने सहमति दी थी अभियोजन वापस लेना, यह सुझाव देना गलत है

कि सार्वजनिक संपत्ति का नुकसान सरकार को होने वाला नुकसान है। सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान होने से सरकारी खजाने को नुकसान होता है। कथित अपराध गंभीर हैं।

प्रकृति; और

(iv) धारा 321 के तहत अदालत की भूमिका यह आकलन करना है कि क्या आवेदन न्याय और सार्वजनिक नीति के हित में सद्भावना से किया गया है, न कि कानून की प्रक्रिया को दबाने के लिए। अभियोजक का आवेदन अदालत को यह सूचित करने में विफल रहता है कि इस मामले में अभियोजन वापस लेने से इन उद्देश्यों को कैसे प्राप्त किया जा सकेगा। इस प्रकार, यह माना जाता है कि आवेदन सद्भावना के बिना दायर किया गया है और बाहरी प्रभाव पर आधारित है।
6. केरल राज्य ने पहले एक आपराधिक पुनरीक्षण याचिका दायर की थी

उच्च न्यायालय। उच्च न्यायालय ने 12 मार्च 2021 के अपने आदेश द्वारा याचिका को खारिज कर दिया और सीजेएम के आदेश की पुष्टि की। ऐसा करते हुए, उच्च न्यायालय ने राज्य के इस तर्क को खारिज कर दिया कि विधायकों पर मुकदमा चलाने से विधानसभा की प्रतिष्ठा कम होगी और इस तरह जनता प्रभावित होगी

ब्याज। उच्च न्यायालय ने कहा किः

8 2019 का सी. सी. सं. 73।

9 ए. आई. आर. 1998 एस. सी. 2120 10 करोड़। रेव. पेट। 2020 का सं. 641।

21] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

एम. एल. एज़. के आचरण को इसमें नहीं माना जा सकता है।

(1)

एक स्वतंत्र लोकतंत्र के कामकाज को आगे बढ़ाना, और उन्मुक्ति के आह्वान की गारंटी नहीं देता है और एम. एल. ए. को दिए गए विशेषाधिकार;

((ख)

केरल विधानसभा में प्रक्रिया और कार्य संचालन के नियम, संविधान के अनुच्छेद 208 (1) के अनुसार बनाए गए, जिसमें पुलिस को उनके खिलाफ अपराध दर्ज करने से पहले अध्यक्ष की अनुमति या मंजूरी लेने का आदेश दिया गया था। विधायक; और

जहाँ तक अभियोजन पक्ष ने इसके बारे में तर्क दिए हैं

(iii)

प्रतिवादी-अभियुक्त के सफल दोषसिद्धि के लिए साक्ष्य की अपर्याप्तता, इस न्यायालय का निर्णय

शिवानंदन पासवान बनाम बिहार राज्य और Ors.[1] 11 इंगित करते हैं कि इस तरह के तर्क प्रतिवादी-अभियुक्त द्वारा अदालत के समक्ष आरोपमुक्त करने की मांग करते हुए उठाए जाने चाहिए।

मजिस्ट्रेट।

7. याचिका को खारिज करते हुए, उच्च न्यायालय ने कहा कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 के तहत आवेदन को खारिज कर दिया गया था। वैध कारणों से सीजेएम। हालाँकि, उच्च न्यायालय को कोई नहीं मिला

" आदेश में इस धारणा के लिए औचित्य कि याचिका सद्भावना के बिना और बाहरी प्रभाव पर दायर की गई थी "

8. केरल राज्य और प्रतिवादी-अभियुक्तों ने इस न्यायालय के समक्ष उच्च न्यायालय के आदेश के खिलाफ स्वतंत्र एसएलपी दायर की है।

बी दलों की प्रस्तुतियाँ

9. केरल राज्य की ओर से पेश वरिष्ठ वकील श्री रंजीत कुमार ने अपीलों के समर्थन में निम्नलिखित दलीलें दीं:

लोक अभियोजक की इससे हटने की शक्ति

((i)

एक या अधिक अपराधों के लिए अभियोजन जिसमें अभियुक्त

मुकदमा चलाया जा सकता है सार्वजनिक न्याय को आगे बढ़ाने के लिए-सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जैसा कि राजेंद्र कुमार जैन बनाम राज्य में विशेष पुलिस प्रतिष्ठान के माध्यम से आयोजित किया गया है और Ors.[1]2 12. उत्तरदाताओं पर जो अपराध करने का आरोप है, वह राज्य की प्रस्तुति के दौरान हुआ

11 (1987) 1 एससीसी 288। 12 (1980) 3 एससीसी 435।

केरल राज्य V. के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

बजट, विधान सभा के परिसर में। उनके कार्य प्रभावी राजनीतिक भागीदारी की अभिव्यक्ति हैं, और एक राजनीतिक उद्देश्य को आगे बढ़ाने में हैं जो उपरोक्त निर्णय के मद्देनजर अभियोजन को वापस लेने के लिए एक वैध आधार है।

से वापस लेने की अनुमति देने वाली अदालत

अभियोजन एक पर्यवेक्षी कार्य करता है न कि एक न्यायिक कार्य। लोक अभियोजक द्वारा दिए गए कारणों की समीक्षा करने का भार उसे अपने ऊपर नहीं लेना चाहिए, बल्कि

केवल यह निर्धारित करें कि क्या लोक अभियोजक ने दिमाग को एक "स्वतंत्र एजेंट के रूप में लागू किया है, जो अप्रासंगिक और बाहरी विचारों से अप्रभावित है";

उच्च न्यायालय ने सी. जे. एम. के आदेश के खिलाफ पुनरीक्षण का निर्णय लेते समय गलत तरीके से शिवानंदन पासवान (ऊपर) में मुख्य न्यायाधीश भगवती की असहमति पर भरोसा किया है। शीओनानंदन पासवान (ऊपर) में बहुमत की राय न्यायमूर्ति खालिद ने अपने और न्यायमूर्ति नटराजन के लिए लिखी थी, जबकि न्यायमूर्ति वेंकटरमैया ने एक अलग राय लिखी थी।

सहमत निर्णय;

जिस घटना के संबंध में शिकायत दर्ज की गई थी,

सभा। पी. वी. नरसिम्हा (ऊपर) में कहा गया है कि किसी भी विधायक के खिलाफ अपराध दर्ज करने के लिए सदन के अध्यक्ष की मंजूरी की आवश्यकता होती है, जो भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के तहत अपराधों तक ही सीमित नहीं है। इस घटना की उत्पत्ति सदन के अंदर एक राजनीतिक विरोध में हुई। कुछ महिला विधायकों के साथ शारीरिक हमला किया गया था, जिसके बाद प्राथमिकी दर्ज की गई थी। बजट पेश करने के दौरान वित्त मंत्री के खिलाफ विरोध हुआ और यह घटना उस विरोध की अभिव्यक्ति थी। इस पृष्ठभूमि में घटना को शांत करने का निर्णय लिया गया और सरकार ने लोक अभियोजक को अभियोजन वापस लेने की सलाह देना उचित समझा; [2021] 6 एस. सी. आर.

(vi)

प्रतिवादी-अभियुक्त के कार्य एक अभिव्यक्ति हैं।

उनके विरोध करने के अधिकार का, जो बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का एक पहलू है। संविधान के अनुच्छेद 194 में प्रावधान है कि अदालत में कोई कार्यवाही शुरू नहीं की जाएगी। विधान सभा के परिसरों के भीतर विधायक द्वारा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का प्रयोग करने के लिए। इसके अलावा, ये कदम बजट के दौरान उठाए गए।

प्रस्तुत करना और मतदान के अधिकार के साथ एक करीबी संबंध रखना जो अनुच्छेद 194 के तहत संरक्षित है। इसके अलावा, इलेक्ट्रॉनिक नियंत्रण कक्ष से प्राप्त 13 मार्च 2015 की घटना का वीडियो कार्यवाही का एक प्रकाशन है।

घर से। अनुच्छेद 194 (2) के तहत, किसी भी सदस्य को सदन के अंदर किसी भी कार्यवाही के प्रकाशन के संबंध में उत्तरदायी नहीं ठहराया जाएगा; और

(vii) उच्च न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकालने के बावजूद कि लोक अभियोजक द्वारा वापस लेने के लिए शुरू की गई याचिका को कोई दुर्भावनापूर्ण नहीं माना जा सकता है, वापस लेने के लिए सहमति देने से इनकार करने वाले सीजेएम के आदेश को बरकरार रखा। ऐसा करके, उच्च न्यायालय ने राजेंद्र कुमार जैन (ऊपर) और शिवानंदन पासवान (ऊपर) में निर्धारित स्थापित सिद्धांतों के विपरीत लोक अभियोजक द्वारा प्रदान किए गए आधारों की समीक्षा करते हुए एक न्यायिक कार्य का प्रयोग किया है, जहां यह अभिनिर्धारित किया गया है कि न्यायालय केवल एक पर्यवेक्षी का प्रयोग कर सकता है।

अधिकार क्षेत्र।

10. श्री जयदीप गुप्ता, प्रतिवादी-अभियुक्त की ओर से पेश वरिष्ठ वकील और साथी में अपील के समर्थन में आग्रह किया किः

((i) बहुमत के दृष्टिकोण में स्पष्ट अंतर है।

और शेयोनंदन पासवान में अल्पमत निर्णय (ऊपर)। बहुमत के निर्णयों के लिए अदालत को यह निर्धारित करने की आवश्यकता होती है कि क्या लोक अभियोजक ने अनुचित तरीके से काम किया है।

अपनी शक्तियों का प्रयोग किया, न्याय के सामान्य पाठ्यक्रम में हस्तक्षेप किया या अवैध उद्देश्यों के लिए शक्तियों का प्रयोग किया। अल्पसंख्यक वर्ग उन शर्तों को लागू करके धारा 321 के दायरे को कम कर देता है जिन्हें बहुमत द्वारा स्वीकार नहीं किया जाता है।

जबकि बहुमत लोक अभियोजक के कार्य पर केंद्रित है, अल्पसंख्यक लोक अभियोजक की शुद्धता पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

चूँकि सी. जे. एम. ने सही सिद्धांतों को लागू नहीं किया, उच्च

((ख)

न्यायालय अपने पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 को सुधारने के लिए हस्तक्षेप करना चाहिए था

निर्णय; और

(111) असली परीक्षा यह है कि क्या लोक अभियोजक का निर्णय न्याय के प्रशासन को नष्ट कर देगा। इसका उत्तर नकारात्मक में दिया जाना चाहिए और इसलिए निकासी के लिए आवेदन की अनुमति दी जानी चाहिए।

11. दूसरी ओर, श्री महेश जेठमलानी और श्री वी.

प्रतिवादी संख्या 7 और 813 की ओर से उपस्थित वरिष्ठ वकील चितमबरेश और अधिवक्ता-ऑन रिकॉर्ड श्री रमेश बाबू ने अपीलकर्ताओं और प्रतिवादी-अभियुक्त के रुख का विरोध करते हुए आग्रह किया किः

((i)

विधायक द्वारा अंदर बोलने की स्वतंत्रता का प्रयोग

सदन अपने भीतर संपत्ति को नष्ट करने के अधिकार को शामिल नहीं करता है। अनुच्छेद 194 के तहत विशेषाधिकारों का उपयोग नहीं किया जा सकता है।

विधान सभा के परिसरों में सदस्यों के हिंसक कार्यों के लिए एक आवरण के रूप में;

((ख)

लोकायुक्ता, न्यायमूर्ति में इस न्यायालय का निर्णय रिपुसूदन दयाल (सेवानिवृत्त) और अन्य। बनाम राज्य

मध्य प्रदेश और Ors.¹4 का मानना है कि विशेषाधिकार केवल आवश्यक सीमा तक प्रदान किया जा सकता है ताकि सदस्यों को बिना किसी बाधा के अपने कार्यों को करने की अनुमति दी जा सके। का दावा

विशेषाधिकार का उपयोग आपराधिक कानून के अनुप्रयोग को दरकिनार करने के लिए ढाल के रूप में नहीं किया जा सकता है क्योंकि किसी भी व्यक्ति को आपराधिक अभियोजन के खिलाफ विशेषाधिकार प्राप्त नहीं है।

पी. वी. नरसिम्हा राव (ऊपर) में अवलोकन

(iii)

अध्यक्ष की अनिवार्य पूर्व मंजूरी केवल भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 19 के विशिष्ट संदर्भ में दी गई थी। 1 5 धारा 19 में यह प्रावधान है कि

13 प्रत्यर्थी संख्या 7 और 8 को केरल उच्च न्यायालय के समक्ष सीआरएल में 12 मार्च 2021 के आदेश द्वारा पक्षकारों के रूप में शामिल किया गया था। एम. एपल। 3 2021 और सीआरएल। एम. एपल। 4 क्रमशः 2021 में।

14 (2014) 4 एससीसी 473। 15 " 19. अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी आवश्यक है। - (1) कोई भी अदालत धारा 7,10,11,13 और 15 के तहत दंडनीय अपराध का संज्ञान नहीं लेगी, जो कथित तौर पर किसी लोक सेवक द्वारा किया गया है, सिवाय पूर्व मंजूरी के।

(क) ऐसे व्यक्ति के मामले में जो संघ के मामलों के संबंध में कार्यरत है और केंद्र द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा अपने कार्यालय से हटाने योग्य नहीं है।

उस सरकार की सरकार; [2021] 6 एस. सी. आर.

अधिनियम के तहत अपराधों के लिए लोक सेवक पर मुकदमा चलाने के लिए उक्त व्यक्ति को हटाने के लिए सक्षम प्राधिकारी की मंजूरी की आवश्यकता होती है। चूँकि सांसदों के लिए ऐसा कोई अधिकार निर्दिष्ट नहीं है, पी. वी. नरसिम्हा राव (उपरोक्त) में तीन न्यायाधीशों ने अभिनिर्धारित किया कि जब तक संसद ऐसा निर्दिष्ट नहीं करती, तब तक अध्यक्ष धारा 19 के तहत मुकदमा चलाने की मंजूरी देने में सक्षम होगा। अवलोकन को सामान्य नहीं माना जा सकता है आवेदन का अर्थ यह है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अलावा किसी अन्य अपराध के लिए सदन के सदस्यों पर मुकदमा चलाने के लिए अध्यक्ष की पूर्व मंजूरी की आवश्यकता है।

1988 ;

सी. आर. पी. सी. 16 की धारा 197 तब से विधायकों पर लागू नहीं होती है।

((iv)

उन्हें सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी से पद से नहीं हटाया जा सकता है, जो प्रावधान को लागू करने के लिए एक पूर्व-आवश्यकता है। अन्यथा भी, दंड दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के तहत अभियोजन शुरू करने के प्रारंभिक चरण में आवश्यक नहीं है, लेकिन संज्ञान लेने के बाद ही बाद के चरण में आवश्यक है।

(v)

न्यायमूर्ति भगवती द्वारा शिवानंदन पासवान में लिखित (ऊपर)। हालाँकि, न्यायमूर्ति खालिद और न्यायमूर्ति वेंकटरमैया दोनों ने अपनी बहुमत की राय में कहा कि

कि इस न्यायालय को निचली अदालतों के समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने से खुद को रोकना चाहिए, या तो स्वीकार करना चाहिए या

जनता द्वारा दायर वापसी याचिका को अस्वीकार करना अभियोजक। चूंकि सीजेएम ने वर्तमान मामले में वापसी याचिका को खारिज कर दिया और उच्च न्यायालय ने संशोधन को खारिज कर दिया

सीजेएम के आदेश के खिलाफ याचिका, इस न्यायालय को अदालतों के समवर्ती निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने से बचना चाहिए संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत नीचे; और

(ख) ऐसे व्यक्ति के मामले में जो किसी राज्य के मामलों के संबंध में कार्यरत है और उस सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा अपने पद से हटाने योग्य नहीं है; (ग) किसी अन्य व्यक्ति के मामले में, उसे उसके पद से हटाने के लिए सक्षम प्राधिकारी। [.....] " .

16 " 197. न्यायाधीशों और लोक सेवकों का अभियोजनः (1) जब कोई व्यक्ति जो न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट या लोक सेवक है या था जो सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा अपने पद से हटाने योग्य नहीं है, उस पर अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने का तात्पर्य रखते हुए कथित

रूप से किए गए किसी अपराध का आरोप लगाया जाता है, तो कोई भी न्यायालय पूर्व मंजूरी के अलावा ऐसे अपराध का संज्ञान नहीं लेगा। " .

केरल राज्य v. के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

(vi)

वर्तमान मामले में इस न्यायालय को निम्न द्वारा निर्देशित किया जाना चाहिएः (ए) द

आवेदन की अवैधता पर समवर्ती निष्कर्ष

ड्रग्स एंड साइकोट्रोपिक सब्सटेंस एक्ट, 1951, जो नुकसान पर विचार करने के लिए संसद के इरादे का संकेत देता है सार्वजनिक संपत्ति को एक गंभीर अपराध के रूप में।

सी मुद्दे और विश्लेषण

12. पक्षकारों की दलीलों को स्वीकार करने के बाद, हम इस न्यायालय के समक्ष उठाए गए मुद्दों पर विचार करेंगे। इस टी के समक्ष प्रश्न लोक अभियोजक आर धारा 321 द्वारा शक्ति के प्रयोग और सीजेएम द्वारा अधिकार क्षेत्र के प्रयोग पर केंद्रित है। पक्षों की दलीलें सुनने से पहले, हम चर्चा करना आवश्यक समझते हैं

इस मुद्दे पर कानून का गठन।

C. 1 अभियोजन वापस लेना

13. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 इस प्रकार हैः

" 321. अभियोजन से वापसी। लोक अभियोजक या एक मामले के प्रभारी सहायक लोक अभियोजक, के साथ

न्यायालय की सहमति, निर्णय की घोषणा से पहले किसी भी समय, किसी भी व्यक्ति के अभियोजन से या तो आम तौर पर या

उन अपराधों में से किसी एक या अधिक के संबंध में जिसके लिए वह है

प्रयास किया; और, इस तरह की वापसी पर, (क) यदि यह आरोप तय होने से पहले किया जाता है, तो अभियुक्त

ऐसे अपराध या अपराधों के संबंध में आरोपमुक्त किया जाएगा;

(ख) यदि यह आरोप लगाए जाने के बाद किया जाता है, या जब इस संहिता के तहत किसी आरोप की आवश्यकता नहीं होती है, तो उसे निम्नलिखित के संबंध में बरी कर दिया जाएगाः

ऐसा अपराध या अपराधः

बशर्ते कि जहां ऐसा अपराध हो ((i) किसी ऐसे मामले से संबंधित किसी भी कानून के खिलाफ था जिसके लिए कार्यपालिका

संघ की शक्ति का विस्तार, या [2021] 6 एस. सी. आर.

((ii) दिल्ली विशेष पुलिस प्रतिष्ठान द्वारा जाँच की गई थी।

दिल्ली विशेष पुलिस स्थापना अधिनियम, 1946 (के 25) के तहत

1946) , या

((ग) केंद्र सरकार की किसी भी संपत्ति का गबन या विनाश या नुकसान शामिल है, या

((iv) केंद्र सरकार की सेवा में कार्यरत किसी व्यक्ति द्वारा अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने का इरादा रखते हुए किया गया था, और मामले के प्रभारी अभियोजक को केंद्र सरकार द्वारा नियुक्त नहीं किया गया है, वह, जब तक कि उसे केंद्र सरकार द्वारा ऐसा करने की अनुमति नहीं दी गई है, अभियोजन से पीछे हटने के लिए अपनी सहमति के लिए अदालत का रुख नहीं करेगा और अदालत, सहमति के अनुसार, अभियोजक को केंद्रीय सरकार द्वारा दी गई अनुमति को उसके सामने पेश करने का निर्देश देगी।

सरकार अभियोजन से हट जाए "।

14. सी. आर. पी. सी. की धारा 321 के तहत शक्तियों की व्याख्या इस न्यायालय द्वारा कई मौकों पर की गई है। बिहार राज्य में

बनाम राम नरेश पांडे और Anr.[1]7, इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने पूर्ववर्ती दंड प्रक्रिया संहिता 1898 की धारा 494 का विश्लेषण किया।

(दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 के समान)। न्यायमूर्ति बी. जगन्नाथदास ने कहा कि अभियोजन वापस लेने के लिए सहमति देने में, अदालत एक न्यायिक कार्य करती है। हालाँकि, ऐसा करने में, अदालत को मामले को न्यायिक रूप से निर्धारित करने की आवश्यकता नहीं है। अदालत को केवल इस बात से संतुष्ट होने की आवश्यकता है कि "लोक अभियोजक के कार्यकारी कार्य का अनुचित तरीके से प्रयोग नहीं किया गया है।

या कि यह सामान्य प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने का प्रयास नहीं है

अवैध कारणों या उद्देश्यों के लिए न्याय "। इस न्यायालय ने यह भी कहा

कि धारा 494 के तहत मजिस्ट्रेट की शक्ति कार्यपालिका की शक्ति के दुरुपयोग को रोकने के लिए थी। इस सवाल को संबोधित करते हुए कि क्या साक्ष्य की अपर्याप्तता अभियोजन वापस लेने का आधार है, न्यायालय ने कहा किः

" 9. [.....] हमें यह समझना मुश्किल लगता है कि राय क्यों है

ट्रायल कोर्ट और सेशन कोर्ट दोनों द्वारा पहुँचा गया

कि लोक अभियोजक द्वारा उस सामग्री का लिया गया दृष्टिकोण

अर्थात्। कि यह अल्प प्रमाण था जिस पर कोई दोषसिद्धि नहीं थी के लिए कहा जा सकता है, इतना अनुचित कहा जाना चाहिए कि संहिता की धारा 494 के तहत अदालत की सहमति

आपराधिक प्रक्रिया को रोका जाना चाहिए। यहां तक कि निजी

17 ए. आई. आर. 1957 एस. सी. 389

केरल राज्य V. के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

शिकायतकर्ता जिसे इन कार्यवाही में भाग लेने की अनुमति दी गई थी

अपने सभी चरणों में, अपनी आपत्ति याचिका या पुनरीक्षण याचिकाओं में,

न ही, शिकायतकर्ता के वकील, दलीलों के दौरान इससे पहले कि हम हमें सूचित करें कि कोई अतिरिक्त सामग्री उपलब्ध थी।

इस स्थिति में, इसलिए, इस दृष्टिकोण को छोड़कर कि कोई आदेश नहीं

साक्ष्य को न्यायिक रूप से लेने के बाद ही निपटाया जाता है, हम आशंका व्यक्त करते हैं कि विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने स्वयं यह महसूस नहीं किया होगा कि उन्हें बुलाया गया है

अभ्यास में मजिस्ट्रेट के आदेश में हस्तक्षेप करने पर

उसकी पुनरीक्षण अधिकारिता "।

(जोर दिया गया)

15. एम. एन. शंकरनारायणन नायर बनाम पी. वी. बालकृष्णन 18 1 8 में, यह

न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता 1898 की धारा 494 के तहत अभियोजक को प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग "कानून के उद्देश्य को आगे बढ़ाने" में किया जाना है। सहमति देने की अदालत की शक्ति पर, न्यायमूर्ति पी. जगनमोहन रेड्डी ने कहा कि

उक्त धारा के तहत अनुमति आवश्यक रूप से नहीं दी जानी चाहिए। औपचारिक रूप से केवल मांगने के लिए इसका अनुदान। यह ऐसा कर सकता है

केवल तभी जब यह उसके सामने रखी गई सामग्री पर संतुष्ट हो कि

इसका अनुदान न्याय के प्रशासन को कम करता है और कि गुप्त रूप से अनुमति नहीं ली जा रही थी

पूर्ववर्ती उद्देश्य की पुष्टि के साथ असंबद्ध

कानून जिसके लिए कार्यकारी अंग कर्तव्य में हैं आगे बाध्य हैं

और बनाए रखें। ”

(जोर दिया गया)

16. विशेष पुलिस के माध्यम से राजेंद्र कुमार जैन बनाम राज्य

स्थापना और अन्य "। , सोशलिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया के अध्यक्ष श्री जॉर्ज फर्नांडीस के खिलाफ अभियोजन वापस लेने के लिए एक आवेदन था। श्री फर्नांडिस पर 1975 में लगाए गए आपातकाल के खिलाफ उग्र प्रतिरोध करने और ऐसे कार्य करने की साजिश में भाग लेने का आरोप लगाया गया था जिसके परिणामस्वरूप संपत्ति का विनाश हो सकता था। आपातकाल को निरस्त किए जाने के बाद, विशेष जनता

18 (1972) 1 एससीसी 318। 19 (1980) 3 एससीसी 435।

21] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

अभियोजक ने 'बदली हुई परिस्थितियों और जनहित को देखते हुए' दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 के तहत एक आवेदन दायर किया। विवाद की राजनीतिक पृष्ठभूमि को देखते हुए, इस न्यायालय की दो न्यायाधीशों की पीठ ने न्यायमूर्ति ओ. चिन्नाप्पा रेड्डी के माध्यम से बोलते हुए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 के तहत शक्ति का प्रयोग करने में लोक अभियोजक की स्वतंत्रता के महत्व पर प्रकाश डाला। अभियोजन वापस लेने के संदर्भ में जहां सार्वजनिक नीति के मामले शामिल हैं, न्यायालय ने कहा किः

" 16. अतीत में, हम अक्सर जानते हैं कि लोक अभियोजक के लिए जन आंदोलनों, सांप्रदायिक दंगों, क्षेत्रीय विवादों, औद्योगिक संघर्षों, छात्रों की अशांति से उत्पन्न अभियोजन से पीछे हटना जनहित में कितना समीचीन और आवश्यक है

आदि। जहाँ भी मुद्दे भावनाओं को शामिल करते हैं और वहाँ एक है

वातावरण में हिंसा का अधिभार शांति बहाल करने, हिंसा के अधिभार से वातावरण को मुक्त करने, मुद्दों का शांतिपूर्ण समाधान लाने और तूफान के बाद होने वाली शांति को बनाए रखने के लिए अक्सर अभियोजन से पीछे हटना आवश्यक पाया गया है। उन अभियोजनों को जारी रखना जहां कानून को सही साबित करने के नाम पर भावनात्मक मुद्दे शामिल हैं, यहां तक कि पूरी तरह से प्रतिकूल हो सकता है। एक निर्वाचित सरकार, जो लोगों की भावनाओं और भावनाओं के प्रति संवेदनशील और उत्तरदायी होगी, पूरी तरह से उचित होगी यदि सद्भावना का वातावरण बनाने के उद्देश्य से या शांति को बाधित नहीं करने के उद्देश्य से जो वह निर्णय लेती है।

इसमें शामिल अपराधियों पर मुकदमा नहीं चलाना या पहले से शुरू किए गए अभियोजन के साथ आगे नहीं बढ़ना। ऐसे मामलों में सरकार के अलावा कौन सबसे पहले यह तय कर सकता है कि क्या इसे शुरू करना या जारी रखना अपमानजनक या फायदेमंद होना चाहिए।

अभियोजन। यदि सरकार निर्णय लेती है कि यह होगा

अभियोजन से हटने के लिए जनहित, कैसे है

सरकार इस काम को करेगी?

17. दंड प्रक्रिया संहिता के तहत यह सार्वजनिक है

अभियोजक जिसे अभियोजन से हटना पड़ता है और यह अदालत है जिसे इस तरह की वापसी के लिए अपनी सहमति देनी होती है। [...] यह वह है जिसे कार्यवाही शुरू करने का कार्य सौंपा गया है अभियोजन पक्ष से वापसी। लेकिन, जहां सार्वजनिक नीति के इतने बड़े और संवेदनशील मुद्दे शामिल हैं, उन्हें नीति निर्माताओं से सलाह और मार्गदर्शन लेना चाहिए। उनके सूचना और संसाधनों के स्रोत नीति निर्माताओं के विपरीत बहुत सीमित प्रकृति के हैं।

यदि केरल राज्य V. के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

नीति-निर्माता स्वयं इस मामले में पहले कदम उठाते हैं

उदाहरण के लिए, वास्तव में यह उचित है कि उन्हें कहाँ होना चाहिए

महत्वपूर्ण सार्वजनिक नीति के मामले शामिल हैं, और यदि वे लोक अभियोजक को वापस लेने की सलाह देते हैं

अभियोजन पक्ष, यह कहना अदालत का काम नहीं है कि पहल

सरकार और इसलिए जनता से आता है अभियोजक को स्वतंत्र दिमाग का प्रयोग करने वाला नहीं कहा जा सकता है।

न ही शब्दों पर कोई विवाद हो सकता है। यदि गलत जानकारी वाले लेकिन सार्थक नौकरशाह "लोक अभियोजक को निर्देशित किया जाता है" या "लोक अभियोजक को निर्देशित किया जाता है" जैसे अभिव्यक्तियों का उपयोग करना चुनते हैं।

निर्देश दिया ", अदालत उस आधार पर अकेले इस आधार पर अपनी सहमति से इनकार करके सार्वजनिक नीति के बड़े मुद्दे को नहीं रोकेगी कि लोक अभियोजक ने अभियोजन से वापस लेने की मांग करते समय एक स्वतंत्र एजेंट के रूप में कार्य नहीं किया था। जो दांव पर है वह पत्र की भाषा या लोक अभियोजक की प्रतिष्ठा नहीं है, बल्कि नीति का एक व्यापक प्रश्न है। अदालत, ऐसी स्थिति में, वापसी के कारणों का पता लगाने का प्रयास करती है और

स्वयं को संतुष्ट करें, कि लोक अभियोजक भी संतुष्ट था

कि वह अच्छे के लिए अभियोजन से हट जाए और प्रासंगिक कारण "।

इस प्रकार तथ्य यह है कि वापसी सरकार द्वारा शुरू की गई थी

जब तक लोक अभियोजक ने स्वतंत्र रूप से अपना दिमाग लगाया, तब तक आवेदन को दूषित नहीं किया। के दायरे पर विस्तार सेलोक न्याय के आधार पर, और विशेष रूप से

< दबाव 'राजनीतिक अपराध', न्यायालय ने अभिनिर्धारित कियाः

" 19 . [.....] हमारे वर्तमान उद्देश्य के लिए यह वास्तव में अनावश्यक है कि हम इस बारे में चर्चा करें कि राजनीतिक अपराध क्या हैं, सिवाय एक अस्पष्ट तरीके के। यह कहना पर्याप्त है कि राजनीति के बारे में

सरकार और इसलिए, एक राजनीतिक अपराध एक है

सरकार को बदलने के उद्देश्य से प्रतिबद्ध

किसी राज्य को अपनी नीति बदलने के लिए प्रेरित करना। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को नगर निगम के कानूनों के खिलाफ अपराधों के लिए दोषी ठहराया गया और जेल में डाल दिया गया; उनके आध्यात्मिक पुत्र को भी और पहले पुत्र को भी।

हमारे देश के प्रधानमंत्री।

[.....] 21. यह कहना कि अपराध राजनीतिक चरित्र का है, अपराधी को अपराध से दोषमुक्त करने के लिए नहीं है। लेकिन सवाल यह है कि क्या यह सरकार के लिए लोक अभियोजक [2021] 6 एस. सी. आर. को सलाह देने का एक वैध आधार है।

अभियोजन से हटने के लिए? हम पहले ही बता चुके हैं कि

लोक अभियोजक अभियोजन से हट सकता है

लेकिन सार्वजनिक न्याय के व्यापक उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिए भी और यह कि सार्वजनिक न्याय के ऐसे व्यापक उद्देश्यों में शामिल हो सकते हैं

उचित सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक उद्देश्य। यह है।

अब इतिहास की बात है कि पार्टी की प्रेरक शक्ति जिसका गठन 1977 में चुनाव लड़ने के लिए किया गया था, वही था

आपराधिक साजिश की प्रेरक शक्ति जैसा कि आरोप लगाया गया है

पार्टी जो 1977 के चुनावों के परिणामस्वरूप सत्ता में आई चुनाव के परिणाम को जनादेश के रूप में व्याख्या करने के लिए चुना गया

श्रीमती के नेतृत्व में पार्टी की राजनीति और नीतियों के खिलाफ लोग

गांधी जी। 1980 के चुनावों से पहले की घटनाएं जो

1977 के चुनावों के परिणाम को उलटने से संदेह हो सकता है कि क्या

तत्कालीन सरकार ने 1977 के चुनावों के परिणाम की व्याख्या की लोगों के जनादेश के रूप में और उस व्याख्या के आधार पर

सरकार ने सार्वजनिक पीआर [ओ] प्रतिवेदक को पीछे हटने की सलाह दी

अभियोजन पक्ष, कोई यह नहीं कह सकता कि लोक अभियोजक था

से वापस लेने में किसी भी अनुचित उद्देश्य से सक्रिय

अभियोजन पक्ष और न ही कोई यह कह सकता है कि मजिस्ट्रेट प्रयोग करने में विफल रहे

पर्यवेक्षी कार्य उसे अपनी सहमति देने में निहित है।

(जोर दिया गया)

17. शक्तियों की व्याख्या पर लोकस क्लासिकस

सी. आर. पी. सी. की धारा 321 द्वारा प्रदान किया गया निर्णय शिवानंदन पासवान (ऊपर) में संविधान पीठ का निर्णय है। इस मामले में, पटना शहरी सहकारी बैंक के निदेशक मंडल पर एक ही व्यक्ति को अलग-अलग नामों से कई ऋण देकर और काल्पनिक व्यक्तियों के लिए ऋण को मंजूरी देकर बैंक के धन के दुरुपयोग जैसे दुराचारों का आरोप लगाया गया था। भारतीय रिजर्व बैंक के कहने पर सहकारी समितियों के पंजीयक ने हितधारकों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई शुरू करने का निर्देश दिया। जाँच के दौरान, बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री

डॉ. जगन्नाथ मिश्रा के खिलाफ बयान दिए गए और यह आरोप लगाया गया कि उन्होंने मुख्यमंत्री पद पर रहते हुए अपने पद का दुरुपयोग किया और अपने लिए अवैध व्यक्तिगत लाभ कमाया। एक आरोप पत्र दायर किया गया और सीजेएम ने मामले का संज्ञान लिया। हालाँकि, इससे पहले कि मामला आगे बढ़ता, डॉ. मिश्रा ने एक बार फिर बिहार के मुख्यमंत्री के रूप में शपथ ली और केरल राज्य बनाम द्वारा एक संचार जारी किया गया।

के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

मुख्य न्यायाधीश भगवती ने अपनी अल्पमत राय में कहा कि एक मामले में जहां सबूतों की कमी के आधार पर वापसी याचिका दायर की गई है, आरोप पत्र दायर किए जाने के बाद, लेकिन वारंट मामले में आरोप तय होने से पहले, सहमति देने वाली अदालत द्वारा शक्ति का प्रयोग दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 239 के तहत आरोपी को आरोपमुक्त करने की अदालत की शक्ति के समान है। इसलिए, ऐसे मामलों में, लोक अभियोजक के लिए वापस लेने की याचिका दायर करना तब तक सक्षम नहीं होगा जब तक कि साक्ष्य में भौतिक परिवर्तन होता है। मुख्य न्यायाधीश की राय थी कि अदालत को ऐसे मामलों में आरोपमुक्त करने की कवायद शुरू करनी चाहिए क्योंकि इससे लोगों को अधिक विश्वास होगा। उन्होंने कहाः

" 30. दूसरी योग्यता [.] इसलिए, अदालत धारा 239 के तहत अपने कार्य का प्रयोग करते समय क्या करती है, इस पर विचार करना है -

पुलिस रिपोर्ट और उसके साथ भेजा गया दस्तावेज़ भी

अभियुक्त द्वारा दिया गया बयान यदि अदालत जाँच करने का विकल्प चुनती है उसे। और अगर अदालत को पता चलता है कि उसके खिलाफ कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं है

अभियुक्त अदालत उसे आरोपमुक्त करती है। लेकिन ठीक यही अदालत को करने के लिए कहा जाता है जब लोक अभियोजक द्वारा अभियोजन से वापस लेने के लिए आवेदन किया जाता है

इस आधार पर कि समर्थन करने के लिए अपर्याप्त या कोई सबूत नहीं है

अभियोजन। वहाँ भी अदालत को विचार करना होगा

अभियोजन वापस लेने के लिए अभियोजक उचित है या नहीं और यह सामग्री पहले की सामग्री के समान होगी

20 " धारा 239: अभियुक्त को कब आरोपमुक्त किया जाएगाः यदि पुलिस रिपोर्ट और धारा 173 के तहत उसके साथ भेजे गए दस्तावेजों पर विचार करने और अभियुक्त की ऐसी जांच करने पर, यदि कोई हो, जिसे मजिस्ट्रेट आवश्यक समझता है और अभियोजन पक्ष और अभियुक्त को सुनवाई का अवसर देने के बाद, मजिस्ट्रेट अभियुक्त के खिलाफ आरोप को निराधार समझता है, तो वह अभियुक्त को आरोपमुक्त कर देगा और ऐसा करने के लिए अपने कारणों को दर्ज करेगा।

धारा 239 के तहत अपने कार्य का निर्वहन करते हुए न्यायालय। अगर अदालत वापस लेने के लिए एक आवेदन पर विचार करते हुए

अपर्याप्तता या समर्थन के लिए साक्ष्य की अनुपस्थिति का आधार

अभियोजन पक्ष को सामग्री की जांच करनी होती है यह तय करने का उद्देश्य कि क्या वास्तव में अपर्याप्त है

न्यायालय इस अभ्यास में खुद को भी शामिल कर सकता है जबकि धारा 239 के तहत विचार करते हुए कि क्या अभियुक्त

उसे आरोपमुक्त किया जाएगा या उसके खिलाफ आरोप तय किया जाएगा। यह है।

पुलिस रिपोर्ट पर स्थापित लोक अभियोजक को करना चाहिए से वापस लेने के लिए आवेदन करने का अधिकार हो

इस आधार पर अभियोजन कि अपर्याप्त है या नहीं

अभियोजन पक्ष के समर्थन में साक्ष्य "।

(जोर दिया गया)

19. न्यायमूर्ति खालिद (अपने और न्यायमूर्ति नटराजन के लिए बोलते हुए)

बहुमत की राय देते हुए कहा कि वापसी याचिका के लिए सहमति देने की अदालत की शक्ति दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 के तहत चक्रवृद्धि अपराधों की शक्ति के समान है। दोनों ही मामलों में न्यायालय को अभियुक्त व्यक्ति को दोषी ठहराने या बरी करने के मुद्दे की जांच नहीं करनी होगी, और केवल पर्यवेक्षी तरीके से अधिकार क्षेत्र के प्रयोग के माध्यम से सहमति प्रदान करने तक ही सीमित रहने की आवश्यकता होगी। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यद्यपि धारा 321 मांग करने के लिए कोई आधार प्रदान नहीं करती है वापस लेने, "सार्वजनिक नीति, प्रशासन का हित, राज्य के कारणों से अभियोजन के साथ आगे बढ़ने की अक्षमता, और सबूतों की कमी" को वापस लेने की मांग के लिए वैध आधार माना जाता है। इसके अलावा, यह अभिनिर्धारित किया गया कि वापस लेने की याचिका के लिए सहमति देने का निर्णय लेने में अदालत को खुद को केवल यह निर्धारित करने तक सीमित रखना चाहिए कि क्या अभियोजक ने उपरोक्त वैध कारणों से शक्ति का प्रयोग किया है:

" 73 [.....] जब दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 के तहत आवेदन किया जाता है, तो यह

अदालत के लिए सबूत का आकलन करना आवश्यक नहीं है

क्या मामला दोषसिद्धि या दोषमुक्त होने में समाप्त होगा। मुकाबला करने के लिए

कि न्यायालय जब सहमति देने की अपनी सीमित शक्ति का प्रयोग करता है धारा 321 के तहत साक्ष्य का आकलन करना होगा और यह पता लगाना होगा कि क्या

मामला बरी या दोषसिद्धि में समाप्त होगा, फिर से लिखना होगा

धारा 321 सी. आर. पी. सी. और न्यायालय को केरल राज्य बनाम की शक्ति को स्वीकार करना होगा।

के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

जिसे धारा 321 की योजना में शामिल नहीं किया गया है। द.

धारा 321 के तहत बरी या आरोपमुक्त करने का आदेश समान नहीं है।

आपराधिक मामलों में सामान्य अंतिम आदेश के रूप में। यह होगा निष्कर्ष

मामले में साक्ष्य की विस्तृत चर्चा द्वारा समर्थित नहीं किया जाएगा

दोषमुक्त या प्रथम दृष्टया मामले की अनुपस्थिति या आधारहीनता

निर्वहन का मामला। अदालत को बस इतना देखना है कि क्या

आवेदन सद्भावना से किया जाता है, जनता के हित में

नीति और न्याय और प्रक्रिया को विफल या बाधित करने के लिए नहीं कानून। न्यायालय ने मामले के इन पहलुओं पर विचार करने के बाद,

प्रकट अन्याय का कारण बनने वाली अनियमितताएँ या अवैधताएँ यदि सहमति दी जाती है। इस मामले में, आवेदन को पढ़ने पर

वापस लेने के लिए, सहमति का आदेश और अन्य परिचर

परिस्थितियों में, मुझे यह मानने में कोई संकोच नहीं है कि आवेदन के लिए वापसी और सहमति देने का आदेश उचित और सख्ती से था

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 की सीमा के भीतर।

[.....]

78. यह धारा उन आधारों के बारे में कोई संकेत नहीं देती है जिनके आधार पर

लोक अभियोजक आवेदन या विचार कर सकता है

जिस पर अदालत को अपनी सहमति देनी है। पहल यह है कि

लोक अभियोजक और अदालत को जो करना है वह केवल देना है

उसकी सहमति और किसी भी मामले को न्यायिक रूप से निर्धारित करने के लिए नहीं। न्यायपालिका

न्यायिक विवेकाधिकार के प्रयोग में निहित कार्य

सहमति देने के लिए आम तौर पर इसका मतलब होगा कि अदालत

अभियोजक का अनुचित तरीके से प्रयोग नहीं किया गया है, या यह है कि न्याय के सामान्य पाठ्यक्रम में हस्तक्षेप करने का प्रयास नहीं

अवैध कारणों या उद्देश्यों के लिए।

(जोर दिया गया)

न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि सहमति देते या अस्वीकार करते समय

याचिका दायर करते हुए, अदालत को लोक अभियोजक द्वारा प्रदान किए गए कथित आधारों की समीक्षा नहीं करनी है, लेकिन यह सुनिश्चित करना चाहिए कि यह एक वैध उद्देश्य के लिए है, जिसे बिना किसी दुर्भावना के शुरू किया गया है।20. दोनों, न्यायमूर्ति खालिद ने अपनी बहुमत की राय में और न्यायमूर्ति अतरमैया (तत्कालीन विद्वान मुख्य न्यायाधीश के रूप में) ने अपनी सहमति में कहा कि इस न्यायालय को [2021] 6 एस. सी. आर. को अनुमति देने या खारिज करने, नीचे दी गई अदालतों के वर्तमान निष्कर्षों में हस्तक्षेप करने में सावधानी बरतनी चाहिए।

वापसी याचिका। यह रेखांकित करते हुए कि यह न्यायालय तथ्यों और साक्ष्यों का न्यायालय नहीं है, यह कहा गया थाः

भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत विशेष अवकाश। द. हमारे सामने अपील इस प्रकार आई। यह घोषित नीति रही है

इस न्यायालय को तथ्यों की बारी-बारी से जांच शुरू नहीं करनी चाहिए और

इस तरह के मामलों का साक्ष्य या यहाँ तक कि आरोपमुक्त करने के खिलाफ आदेश। यह न्यायालय खुद को न्यायालय में परिवर्तित नहीं होने देगा।

जिसे नीचे की अदालतों में वापस जाना है, वह गंभीरता से काम करेगा। प्रभावित पक्ष के प्रति पूर्वाग्रह और यह नीति होनी चाहिए

इस न्यायालय को इस निषिद्ध आधार पर नहीं चलना चाहिए और

मामले में ये निष्कर्ष धारा 321 के दायरे से बाहर हैं। यह तभी किया जा सकता है जब हम धारा 321 को फिर से लिखें।

(जोर दिया गया)

21. शेयोनंदन पासवान (ऊपर) में निर्णय ने माना है कि

तब से जमीन। इसके आवेदन का एक उदाहरण तब था जब यह न्यायालय सार्वजनिक धन के दुरुपयोग से जुड़े अपराधों के लिए एक विधायक के अभियोजन को वापस लेने पर विचार कर रहा था। येरनेनी राजा रामचंदर बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और Ors.2[1] में, एक विधायक, अपीलार्थी पर अस्पताल के रिकॉर्ड को गढ़ने का आरोप लगाया गया था ताकि बार-बार रुपये की राशि के लिए चिकित्सा प्रतिपूर्ति का दावा किया जा सके। 2,89,489 , रु. 1,33,939 , और रु. 1,22,825 सरकार की ओर से। रुपये की राशि। 289,489 , रु. 60,000 और रु. 60,000 इनके जवाब में सरकार द्वारा बार-बार मंजूरी दी गई थी

अनुरोध करें। उनके खिलाफ धोखाधड़ी के आरोप लगाए गए थे। चूँकि अपीलार्थी एक विधायक था, इसलिए मामला विधान सभा की आचार समिति को भेजा गया, जहाँ अपीलार्थी ने निविदा प्रस्तुत की। 21 (2009) 15 एससीसी 604।

केरल राज्य v. के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

माफी मांगी और रुपये वापस कर दिए। 60,000 सरकार के लिए। इसके अनुसार, आचार समिति ने अपीलार्थी के खिलाफ अभियोजन वापस लेने की सिफारिश की। राज्य सरकार ने एक आदेश भी जारी किया जिसमें जिला कलेक्टर को अभियोजक को मामला वापस लेने का निर्देश देने की आवश्यकता थी।

अभियोजन वापस लेने के लिए कई आवेदन किए गए, जिन्हें मजिस्ट्रेट ने खारिज कर दिया। हालाँकि, इन्हें अंततः उच्च न्यायालय द्वारा अनुमति दी गई। वापस लेने की अनुमति देने से इनकार करने में अपीलार्थी के खिलाफ अभियोजन पक्ष, इस न्यायालय ने राय दी कि शिवानंदन पासवान (ऊपर) में निर्णय को देखते हुए, उच्च न्यायालय की न्यायिक समीक्षा की शक्ति सीमित थी। यह केवल तभी हस्तक्षेप कर सकता था जब मजिस्ट्रेट द्वारा कानून की कोई त्रुटि की गई हो। इसके अलावा, न्यायालय ने नैतिकता द्वारा की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई के निहितार्थ पर भी विचार किया।

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 के तहत अभियोजन वापस लेने पर विधान सभा की समिति। न्यायमूर्ति एस. बी. सिन्हा ने दो न्यायाधीशों की पीठ की ओर से बोलते हुए कहा कि

" 15. आंध्र प्रदेश राज्य के विधानमंडल की नैतिकता समिति को अनुशासनात्मक कार्रवाई से निपटने का अधिकार था या अन्यथा जो विधान सभा के सदस्यों के खिलाफ की जा सकती है। विधान सभा के किसी सदस्य के खिलाफ आपराधिक मामले को, आम तौर पर, अपनी योग्यता के आधार पर जारी रखने की अनुमति दी जानी चाहिए, विशेष रूप से, वर्तमान मामले के तथ्यों के आलोक में जिसमें उच्च न्यायालय ने मामले में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया था। कार्यवाहियों के पूर्व चरण। हमने भी देखा है

18. सरकारी आदेश केवल नैतिकता समिति द्वारा की गई सिफारिशों के संदर्भ में राज्य के अनुसार भी जारी किया गया था। [.....] नैतिकता समिति के पास ऐसी सिफारिशें करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। यदि राज्य ने किसी निकाय द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर कार्य किया था जिसकी कोई भूमिका नहीं थी खेल , इसकी कार्रवाई कानून, सिफारिशों में दूषित हो जाएगी

नैतिकता समिति का अनधिकृत होने के कारण, की कार्रवाई राज्य कानून में द्वेष के सिद्धांत को आकर्षित करेगा।

21] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

19. अन्यथा भी, राज्य की ओर से कार्रवाई, हमारे

राय, तथ्य पर भी द्वेष से ग्रस्त है। राज्य है

कानून का रक्षक। जब यह किसी सार्वजनिक कोष से संबंधित होता है, तो उसे इसमें कार्य करना चाहिए कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया की शर्तें। जनता के संबंध में

कोष, सार्वजनिक विश्वास का सिद्धांत भी लागू होगा

जहाँ तक राज्य और उसके अधिकारियों का संबंध है। यह हो सकता है।

नहीं, बचत करें और बहुत मजबूत और ठोस कारणों को छोड़कर, आदेशों के बावजूद उक्त सरकारी आदेश जारी किया है

उच्च न्यायालय "।

(जोर दिया गया)

22. कार्यपालिका द्वारा सार्वजनिक विश्वास के उल्लंघन से जुड़े अपराधों में

या विधायी प्राधिकरण, इस न्यायालय ने अपराध की गंभीरता और सार्वजनिक जीवन पर अभियोजन वापस लेने के प्रभाव का मूल्यांकन किया है। बैराम मुरलीधर बनाम आंध्र प्रदेश राज्य 2 2 में अभियोजक एक पुलिस अधिकारी के खिलाफ अभियोजन वापस लेने की मांग कर रहा था। जिस पर अपहरण के अपराध के लिए किसी विशेष व्यक्ति को फंसाने के बदले रिश्वत मांगने और व्यक्ति के बेटे के खिलाफ आरोपों को कम करने का आरोप लगाया गया था। पुलिस अधिकारी पर भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 की धारा 7 और 13 (1) के तहत अपराधों का आरोप लगाया गया था। अभियोजक द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 के तहत एक आवेदन इस तथ्य के आधार पर दायर किया गया था कि सरकार ने अधिकारी के खिलाफ अभियोजन वापस लेने का आदेश जारी किया था और निर्देश दिया था कि उसका मामला अनुशासनात्मक कार्यवाही के लिए प्रशासनिक न्यायाधिकरण के समक्ष रखा जाए। इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय के समवर्ती निष्कर्षों की पुष्टि की और वापस लेने के आवेदन को खारिज कर दिया। न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा (जैसा कि वे तब थे) ने दो न्यायाधीशों की पीठ की ओर से बोलते हुए कहा कि

" 19. हाथ में मामले में, जनता द्वारा दायर आवेदन के रूप में

सामग्री का अध्ययन किया और अपने स्वतंत्र दिमाग को पूरी तरह से लागू किया क्योंकि उन्होंने ऐसा कहा है। आवेदन को इंगित करना चाहिए

सामग्री का अवलोकन यह बताते हुए कि सामग्री क्या है

उसने पढ़ा है, संक्षिप्त में हो सकता है, और क्या ऐसा है

अभियोजन वापस लेने से जनहित की पूर्ति होगी

और कैसे उन्होंने अपनी स्वतंत्र राय बनाई है। जैसे हम।

समझा, विद्वान लोक अभियोजक पूरी तरह से किया गया है

सरकार के आदेश द्वारा निर्देशित और वास्तव में नहीं

22 (2014) 10 एससीसी 380।

केरल राज्य v. के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

न्यायाधीश के साथ-साथ उच्च न्यायालय ने भी कहा है कि यह एक मामला है भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत। उन्होंने ध्यान दिया है कि

तथ्य यह है कि राज्य सरकार पहले ही मंजूरी दे चुकी है।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि भ्रष्टाचार निरोधक ब्यूरो ने पाया है

[.....] 22. हमने इन अधिकारियों को केवल यह दिखाने के लिए संदर्भित किया है कि

लोक अभियोजक द्वारा दायर आवेदन में, हम हैं विचार किया गया कि विद्वत परीक्षण द्वारा व्यक्त किया गया दृष्टिकोण

न्यायाधीश के साथ-साथ उच्च न्यायालय को भी दोषी नहीं पाया जा सकता है।

और जनहित की सेवा करें। इसके अलावा, कोई स्वतंत्र नहीं था विद्वान लोक अभियोजक की ओर से दिमाग का अनुप्रयोग,

संभवतः यह सोचकर कि अदालत केवल एक पर आदेश पारित करेगी पूछते हैं। "

(जोर दिया गया)

23. इस न्यायालय के निर्णयों से जो सिद्धांत उभरते हैं

ई. सी. आर. पी. सी. की धारा 321 के तहत अभियोजन वापस ले सकता है।

तैयार किया जाए:

धारा 321 एक से वापस लेने का निर्णय सौंपती है

((i)

लोक अभियोजक के लिए अभियोजन लेकिन की सहमति

अभियोजन वापस लेने के लिए अदालत की आवश्यकता होती है;

((ख)

न केवल साक्ष्य की कमी के आधार पर बल्कि सार्वजनिक न्याय के व्यापक उद्देश्यों को आगे बढ़ाना;

(iii)

लोक अभियोजक को एक स्वतंत्र राय तैयार करनी चाहिए

से वापस लेने के लिए अदालत की सहमति लेने से पहले

अभियोजन पक्ष;

(iv) जबकि केवल यह तथ्य कि पहल से आई है

सरकार निकासी के लिए आवेदन को दूषित नहीं करेगी,

न्यायालय को कारणों को उजागर करने का प्रयास करना चाहिए वापस लेना ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि लोक अभियोजक

संतुष्ट है कि अभियोजन वापस लेना आवश्यक है अच्छे और प्रासंगिक कारणों से; [2021] 6 एससीआर।

यह तय करने में कि वापस लेने के लिए अपनी सहमति देनी है या नहीं, अदालत एक न्यायिक कार्य करती है लेकिन इसे प्रकृति में पर्यवेक्षी बताया गया है। यह तय करने से पहले कि अपनी सहमति देनी है या नहीं, अदालत को संतुष्ट होना चाहिए किः

लोक अभियोजक का कार्य नहीं किया गया है

(अ)

अनुचित रूप से प्रयोग किया गया या कि यह न्याय के सामान्य पाठ्यक्रम में हस्तक्षेप करने का प्रयास नहीं है अवैध कारण या उद्देश्य;

(ख)

सार्वजनिक नीति और न्याय का हित, और कानून की प्रक्रिया को विफल या बाधित नहीं करना; आवेदन इस तरह से पीड़ित नहीं है

((ग)

अनुचितताएँ या अवैधताएँ जो स्पष्ट अन्याय का कारण बनेंगी यदि सहमति दी जानी थी;

सहमति का अनुदान उप-प्रशासन की सेवा करता है

((घ)

न्याय; और

(ई)

पूर्व अनुमति के साथ अनुमति नहीं ली गई है।

कानून की पुष्टि के साथ असंबद्ध उद्देश्य

जिसे बनाए रखना लोक अभियोजक का कर्तव्य है;

यह निर्धारित करते हुए कि क्या अभियोजन की वापसी न्याय के प्रशासन के अधीन है, न्यायालय अपराध की प्रकृति और गंभीरता और सार्वजनिक जीवन पर इसके प्रभाव की जांच करने में उचित होगा, विशेष रूप से जहां सार्वजनिक धन और सार्वजनिक न्यास के निर्वहन से जुड़े मामले शामिल हैं; और

ऐसी स्थिति में जहां विचारण न्यायाधीश और पुनरीक्षण न्यायालय दोनों ने सहमति देने या अस्वीकार करने में सहमति व्यक्त की है, यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए परेशान करने से पहले सावधानी बरतेंगे।

समवर्ती निष्कर्ष। न्यायालय इस अधिकारिता के प्रयोग से जुड़े सुव्यवस्थित सिद्धांतों का प्रयोग करते हुए ऐसे मामले में हस्तक्षेप कर सकता है जिसमें सुनवाई न्यायाधीश या उच्च न्यायालय की सहमति देने या रोकने का निर्णय लेने में सही सिद्धांतों को लागू करने के लिए।

केरल राज्य v. के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

C. 2 विधायकों की छूट और विशेषाधिकार

24. संविधान के अनुच्छेद 105 और 194 में इसी तरह का प्रावधान है।

संसद सदस्यों के विशेषाधिकारों और उन्मुक्ति के लिए 2,3 और

क्रमशः एस। संविधान का अनुच्छेद 194 नीचे दिया गया हैः

" 194. विधान सभा की शक्तियाँ, विशेषाधिकार आदि और इसके सदस्य और समितियाँ

(1) इस संविधान के प्रावधानों और नियमों के अधीन और विधानमंडल की प्रक्रिया को विनियमित करने वाले स्थायी आदेश,

प्रत्येक राज्य के विधानमंडल में बोलने की स्वतंत्रता होगी।

(2) किसी राज्य के विधानमंडल का कोई भी सदस्य उत्तरदायी नहीं होगा। कही गई किसी भी बात के संबंध में किसी भी अदालत में किसी भी कार्यवाही के लिए

या विधान-मंडल में उसके द्वारा दिया गया कोई मत या कोई

एक के अधिकार द्वारा या उसके तहत प्रकाशन का सम्मान ऐसे विधानमंडल का सदन किसी प्रतिवेदन, पत्र, मतों या

कार्यवाही।

(3) अन्य मामलों में, एक की शक्तियाँ, विशेषाधिकार और उन्मुक्ति

ऐसे विधानमंडल के किसी सदन की समितियाँ ऐसी होंगी जो समय-समय पर विधानमंडल द्वारा कानून द्वारा परिभाषित किया जाएगा, और, जब तक

इस प्रकार परिभाषित, वे होंगे जो उस सदन और उसके सदस्यों के होंगे और

अनुभाग के लागू होने से तुरंत पहले समितियाँ

26 संविधान का चालीसवां संशोधन अधिनियम, 1978। (4) खंड (1), (2) और (3) के प्रावधान इस संबंध में लागू होंगे।

जिन व्यक्तियों को इस संविधान के आधार पर अधिकार है

किसी सदन की कार्यवाही में बोलना और अन्यथा भाग लेना

किसी राज्य के विधान-मंडल या उसकी किसी समिति के रूप में वे उस विधानमंडल के सदस्यों के संबंध में लागू होता है।

(जोर दिया गया)

25. अनुच्छेद 194 का खंड 1 अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को मान्यता देता है।

प्रत्येक राज्य की स्थिति। हालांकि, खंड द्वारा मान्यता प्राप्त स्वतंत्रता

संविधान के प्रावधानों और स्थायी आदेशों के अधीन

राज्य विधानमंडलों की प्रक्रिया को लागू करना। खंड 2 प्रतिरक्षा के ई का प्रतिपादन करता है जो विधायिका के सदस्य को एक से बचाता है

4) 10 एससीसी 380।

विधायिका में या विधायिका की किसी समिति में "किसी भी बात के संबंध में या दिए गए वोट के संबंध में" किसी भी न्यायालय में कार्यवाही। इसके अलावा यह सदन द्वारा या उसके अधिकार के तहत एक रिपोर्ट, पेपर, वोट या कार्यवाही के प्रकाशन के लिए किसी भी दायित्व के खिलाफ एक ढाल प्रदान करता है। इसके अलावा, का खंड 3 अनुच्छेद 194 में प्रावधान है कि अन्य मामलों में विशेषाधिकार और उन्मुक्ति कानून द्वारा परिभाषित हैं। जब तक कानून द्वारा परिभाषित नहीं किया जाता है-इस विषय पर वर्तमान में कोई कानून नहीं है-सदन और इसकी समितियों के सदस्यों के विशेषाधिकार और उन्मुक्ति ऐसी होंगी जो संविधान के चालीसवें संशोधन की धारा 26 के लागू होने से पहले मौजूद थीं। खंड 4 के अनुसार, विशेषाधिकार और उन्मुक्ति उन लोगों को भी मिलती है जिन्हें सदन या इसकी समितियों की कार्यवाही में बोलने और भाग लेने का अधिकार है।

26. संविधान के अंगीकार किए जाने के समय, अनुच्छेद 194 के खंड 3 में यह प्रावधान किया गया था कि - किसी राज्य के विधानमंडल का सदन (और उसके सदस्यों और समितियों का) ऐसा होगा जो समय-समय पर विधानमंडल द्वारा कानून द्वारा परिभाषित किया जा सके, और जब तक इस तरह परिभाषित नहीं किया जाता है, तब तक वे यूनाइटेड किंगडम की संसद के हाउस ऑफ कॉमन्स के होंगे।

संविधान। संविधान के बयालीसवें संशोधन की धारा 34 द्वारा अनुच्छेद 194 के खंड (3) में संशोधन किया गया और इसमें एक अस्थायी प्रावधान शामिल किया गया जिसके तहत शक्तियां, विशेषाधिकार और

किसी राज्य के विधानमंडल के सदन (और सदस्यों और समितियों) की उन्मुक्ति को विधानमंडल द्वारा बनाए गए कानून द्वारा परिभाषित किया गया था, वे ब्रिटिश हाउस ऑफ कॉमन्स के होंगे और उनके विशेषाधिकार होंगे -

प्रत्येक सदन "ऐसा होगा जो समय-समय पर ऐसे सदन द्वारा विकसित किया जाए।" हालाँकि, संविधान (बयालीस) संशोधन अधिनियम 1976 की धारा 1 (2) के तहत अधिसूचना जारी करके धारा 34 को लागू नहीं किया गया था। अंततः, अपने वर्तमान रूप में खंड (3) को 20 जून 1979-24 से संविधान (चालीस-चौथा) संशोधन अधिनियम 1978 की धारा 26 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। खंड (3) की वर्तमान स्थिति यह है किः 24 20 जून 1979 से लागू संविधान (चालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 की धारा 26 इस प्रकार हैः

" 26. संविधान के अनुच्छेद 194 में, खंड (3) में, "शब्द यूनाइटेड किंगडम की संसद के आम सभा और उसके सदस्यों के होंगे और समितियाँ, इस संविधान के प्रारंभ में ", शब्द, संख्या और कोष्ठक" उस सदन के होंगे और संविधान (चालीसवां संशोधन) अधिनियम 1978 की धारा 26 के लागू होने से तुरंत पहले इसके सदस्यों और समितियों के "प्रतिस्थापित किए जाएंगे। केरल राज्य v.

के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

((i)

शक्तियों, विशेषाधिकारों और उन्मुक्ति का अंतिम स्रोत

राज्य विधानमंडल के किसी सदन और सदस्यों और समितियों का निर्धारण एक विधान के माध्यम से किया जाएगा।

((ख)

जब तक ऐसा विधान अधिनियमित नहीं किया जाता है, तब तक स्थिति जैसी थी

चालीसवां संशोधन अधिनियम 1978 की धारा 26 के लागू होने से तुरंत पहले शासन करेगा; और

अवधारणा को प्रस्तुत करते हुए संविधान में संशोधन

(iii)

विधानमंडल के सदन द्वारा विशेषाधिकारों और उन्मुक्तिओं के विकास का प्रावधान कभी लागू नहीं हुआ और अब इसे हटा दिया गया है।

C. 2 यूनाइटेड किंगडम में स्थिति

27. अब, इस पृष्ठभूमि में, शुरू में ही सदन को निर्दिष्ट विशेषाधिकारों और उन्मुक्ति की प्रकृति का आकलन करना आवश्यक होगा

यूनाइटेड किंगडम में कॉमन्स। एर्स्किन मे की संसद

अभ्यास 25, कानून का एक व्यापक विवरण प्रदान करता है, जो उन चरणों का संकेत देता है जिनके माध्यम से ब्रिटेन में संसदीय विशेषाधिकार विकसित हुआ।

पहला चरण

संसद और अदालतों के बीच संघर्ष का पहला चरण "लेक्स संसद और इंग्लैंड के सामान्य कानून के बीच संबंधों के बारे में" था। इस दृष्टिकोण में, संसद के सदन ने अभिनिर्धारित किया कि "वे अकेले अपने विशेषाधिकारों की सीमा और अनुप्रयोग के न्यायाधीश थे, जो किसी भी अदालत द्वारा जांचे जाने योग्य नहीं थे या किसी भी अपील के अधीन नहीं थे।" संघर्ष के पहले चरण का वर्णन इस प्रकार किया गया है:

" न्यायालय और कॉमन्स के उचित क्षेत्रों के बारे में पहले के विचार राजनीतिक घटनाओं और उन संवैधानिक परिवर्तनों से बहुत प्रभावित थे जिनसे वे जन्म लेते थे। सत्रहवीं शताब्दी की शुरुआत में कोक ने संसद के कानून को एक विशेष कानून के रूप में माना, जो सामान्य कानून से अलग था। इस कारण से "न्यायाधीशों को संसद के किसी मामले पर कोई राय नहीं देनी चाहिए, क्योंकि इसका निर्णय सामान्य कानूनों द्वारा नहीं किया जाना है, बल्कि दूसरे कानून और अन्य द्वारा किया जाना है।

25 एर्सकिन मे, पार्लियामेंटरी प्रैक्टिस, अध्याय 17, पृष्ठ 281 (24 वां संस्करण, लेक्सिसनेक्सिस, 2011)। 26 सर एडवर्ड कोक, इंग्लैंड के कानूनों के संस्थानों का चौथा भाग 14 (1797)।

अन्य न्यायालयों में यह प्रश्न कि लेक्स संसद सामान्य कानून का हिस्सा है और अदालतों को पता है, और यह कि किसी भी सदन में विशेषाधिकार की घोषणा करने वाले प्रस्ताव अदालतों को बाध्य नहीं करेंगे-लगभग उतनी ही जल्दी पाए जाते हैं, और समय बीतने के साथ उन्होंने गति प्राप्त की।

दूसरा चरण

एर्स्किन मे ने हमें बताया कि उन्नीसवीं सदी के दूसरे चरण में

शताब्दीः

" ..... के नाम पर किए गए अधिकार क्षेत्र के पहले के कुछ दावे

हाउस ऑफ कॉमन्स द्वारा विशेषाधिकार एक अदालत में असमर्थनीय थे

कानूनः कि संसद का कानून सामान्य कानून का हिस्सा था, कि

अधिक समय तक विवादित रहें। उसी समय, यह स्थापित किया गया कि वहाँ एक ऐसा क्षेत्र था जिसमें हाउस ऑफ कॉमन्स का अधिकार क्षेत्र था

पूर्ण और अनन्य था। "

तीसरा चरण

मामला सदन की कार्यवाही है, शुरुआत और अपनी खुद की दीवारों के भीतर समाप्त हो रहा है, यह स्पष्ट रूप से बाहर है

न्यायालयों की अधिकारिता, जब तक कि आपराधिक कार्य शामिल न हों।

समान रूप से स्पष्ट रूप से, यदि सदन की किसी कार्यवाही के परिणामस्वरूप कार्रवाई होती है सदन के बाहर प्रयोग किए जाने वाले व्यक्तियों के अधिकारों को प्रभावित करना,

कार्यवाही प्रकाशित करने वाला व्यक्ति या निष्पादित करने वाला सेवक

आदेश (उदाहरण के लिए) न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र में होगा,

जो यह जांच कर सकता है कि क्या शिकायत किया गया कार्य विधिवत रूप से शामिल है आदेश द्वारा, और क्या सदन द्वारा दावा किया गया विशेषाधिकार

जैसा कि अनुरोध किया गया है, उस व्यक्ति के कार्य को उचित ठहराता है जिसने निष्पादित किया आदेश "।

(जोर दिया गया)

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में, हाउस ऑफ कॉमन्स एक

वाक्यांश की सीमाओं और संसद में कार्यवाही के लिए प्रदान किए गए संरक्षण के बारे में महत्वपूर्ण निष्कर्ष।

28. ब्रिटिश हाउस ऑफ कॉमन्स के विशेषाधिकार

अनुच्छेद 194 के खंड (3) में सन्निहित संविधान के प्रारंभ के महत्वपूर्ण परिणाम हैं।

सबसे पहले, केरल की प्रकृति और राज्य v. के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

सदस्यों द्वारा प्राप्त विशेषाधिकारों की सीमा अदालतों द्वारा तय की जानी थी न कि विधायिका द्वारा, अंग्रेजी सिद्धांत का पालन करते हुए कि अदालतों को यह निर्धारित करने की शक्ति है कि सदन को कोई विशेष विशेषाधिकार प्राप्त है या नहीं। दूसरा, अदालतों के पास यह निर्धारित करने की शक्ति थी कि क्या ब्रिटिश हाउस ऑफ कॉमन्स का कोई भी विशेषाधिकार जो संविधान के प्रारंभ की तारीख को मौजूद था, संविधान के प्रावधानों के साथ असंगत हो गया था।

संविधान। इस प्रकार यह आवश्यक है कि हम यूनाइटेड किंगडम के निर्णयों का उल्लेख करें कि क्या हाउस ऑफ कॉमन्स के दायरे में किए गए आपराधिक अपराध 'संसदीय विशेषाधिकारों' के तहत आते हैं। अभियोजन से प्रतिरक्षा प्राप्त करना।

30. आर बनाम एलियट, होल्स और वेलेंटाइन 27 में, सर जॉन एलियट और उनके साथियों ने हाउस ऑफ कॉमन्स में अर्मेनियाई लोगों के खिलाफ विरोध प्रदर्शन किया।

सदन में अंग्रेजी चर्च में आंदोलन। विरोध के दौरान, सदन के तीन सदस्यों ने अध्यक्ष को रोकने के लिए बल प्रयोग किया, जिससे वे सदन को स्थगित करने से बच गए। उन पर राजद्रोही भाषण और हमले का आरोप लगाया गया था। किंग्स बेंच की अदालत ने सदस्यों के इस तर्क को खारिज कर दिया कि केवल सदन के पास उनके आचरण की जांच करने का विशेष अधिकार क्षेत्र है, और जुर्माना लगाया और उन्हें कारावास की सजा सुनाई। हाउस ऑफ लॉर्ड्स ने त्रुटि के रिट पर राजा की पीठ के फैसले को उलट दिया। निर्दिष्ट त्रुटियों में से एक यह थी कि राजद्रोही भाषण और अध्यक्ष पर हमले के आरोप का उसी फैसले से निपटारा नहीं किया जाना चाहिए था। यह देखा गया कि जबकि पहला सदन के अनन्य अधिकार क्षेत्र में था, बाद वाले पर 'शायद' अदालतों द्वारा मुकदमा चलाया जा सकता था। यह स्पष्ट और स्पष्ट रूप से नहीं कहा गया था कि सदन के अंदर हमले का मुकदमा केवल सदन द्वारा चलाया जा सकता है।

31. ब्रैडलॉफ बनाम गोसेट में, सदन के 28 निर्वाचित सदस्य

कॉमन्स ने अध्यक्ष को शपथ दिलाने से रोक दिया। इसके बाद, सार्जेंट-एट-आर्म्स ने सदस्य को सदन के परिसर से हटाने के लिए शारीरिक बल का प्रयोग किया। निर्वाचित सदस्य

सार्जेंट के खिलाफ कार्रवाई शुरू की गई और उसे खारिज कर दिया गया। न्याय

27 (1629) 3 सेंट ट्र 292-336। 28 [1884] ईडब्ल्यूएचसी 1 (क्यूबी)।

एक निजी व्यक्ति-को रोकने के लिए बल का उपयोग करने का एक प्रयोग योग्य अधिकार है अतिक्रमणकारी को सदन में प्रवेश करने से रोकें और दूसरों को उसके आदेश का पालन करने के लिए अधिकृत करें। इस संदर्भ में उन्होंने कहाः

" इस मामले में एकमात्र बल जो प्रश्न में आता है, वह है,

बल जैसा कि कोई भी निजी व्यक्ति किसी अतिक्रमण को रोकने के लिए लगा सकता है

अपनी ही ज़मीन पर। मुझे इस प्रस्ताव के लिए कोई अधिकार नहीं पता है कि

हाउस ऑफ कॉमन्स में किया गया एक साधारण अपराध

आपराधिक प्रक्रिया के सामान्य पाठ्यक्रम से वापस ले लिया जाएगा

न्याय "।

(जोर दिया गया)

न्यायमूर्ति स्टीफन ने 'साधारण अपराधों' में अंतर करने की मांग की।

' अपराध '। पूर्व में, उन्होंने उन आपराधिक अपराधों का उल्लेख किया जो सदन के दायरे में किए जाते हैं, लेकिन आवश्यक संसदीय कार्यों में प्रभावी भागीदारी के लिए कोई संबंध नहीं रखते हैं।

32. आर बनाम चेटर और अन्य में, यूके सुप्रीम कोर्ट था

चार अभियुक्त व्यक्तियों के साथ व्यवहार करना, जिन पर संसदीय खर्चों के संबंध में झूठे लेखांकन का आरोप लगाया गया था और उन्होंने कानूनी कार्यवाही से प्रतिरक्षा का दावा किया था क्योंकि यह उनके संसदीय विशेषाधिकार का उल्लंघन करता है। उनके खिलाफ सदन द्वारा अनुशासनात्मक कार्यवाही शुरू की गई। अधिकार विधेयक 1689 के अनुच्छेद 9 में प्रावधान है कि संसद में बोलने और बहस या कार्यवाही की स्वतंत्रता को समाप्त नहीं किया जाना चाहिए।

संसद के बाहर किसी भी अदालत या स्थान द्वारा पूछताछ। इससे पहले का सवाल

न्यायालय "संसद में कार्यवाही" का गठन करता था। लॉर्ड फिलिप्स ने देखा किः

जहाँ उचित समझा जाएगा वहाँ पुलिस को आमंत्रित किया जाएगा। न्यायालयों में अभियोजन की दृष्टि से हस्तक्षेप करना।

इसके अलावा, आपराधिक कार्यवाही संभव होने की संभावना नहीं है

संसद के सहयोग के बिना। इससे पहले कि कोई अभियोजन कर सके तथ्यों की जांच करना और प्राप्त करना आवश्यक है

सबूत "।

(जोर दिया गया)

29 [2010] यूकेएससी 52.

केरल राज्य v. के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

लॉ लॉर्ड ने आगे कहा कि दावों को प्रस्तुत करना है

संसद के प्रशासन के लिए आकस्मिक और कार्यवाही के लिए नहीं

संसद के बारे में:

" 90. जहाँ सदन इस संभावना से अवगत हो जाता है कि आपराधिक अपराध किसी सदस्य द्वारा किए गए हो सकते हैं

संसद के कार्य के प्रशासन के संबंध में

ऐसी परिस्थितियाँ जो प्रदत्त परम विशेषाधिकार से बाहर हैं

अनुच्छेद 9 द्वारा, नीति के विचार जिनका मैंने उल्लेख किया है।

उपरोक्त पैरा 61 में यह अपेक्षा की गई है कि सदन को निर्दिष्ट करने में सक्षम होना चाहिए।

आपराधिक कार्यवाही पर विचार करने के लिए पुलिस को मामला,

या प्रासंगिक तथ्यों की जांच में पुलिस के साथ सहयोग करना।

कार्यवाही के संबंध में सदन ने यही किया है तीन अभियुक्तों के खिलाफ लाया गया। "

ब्रैडलॉफ में न्यायमूर्ति स्टीफन द्वारा दिए गए विशिष्टता का उल्लेख करते हुए

(ऊपर), लॉर्ड लॉजर ने कहा:

" 118. यह स्थिति आज भी बनी हुई है। इसलिए मेरे पास नहीं है।

सन्देह है कि, यदि वे अपराध जिनके साथ अपीलार्थी आरोपित हैं

"साधारण अपराध" के रूप में माना जाना चाहिए, तो-यहां तक कि यह मानते हुए भी

कि उन पर आरोप लगाया जाता है कि वे पूरी तरह से इसके भीतर किए गए थे

सदन के परिसर-अपीलार्थियों पर मुकदमा चलाया जा सकता है

क्राउन कोर्ट। इसलिए एकमात्र सवाल यह है कि क्या अपराधों का कोई भी पहलू है जो उन्हें अपराध से बाहर निकालता है।

"साधारण अपराध" की श्रेणी और संकीर्ण श्रेणी में

आचरण जिसके संबंध में सदन एक का दावा करेगा

अनन्य संज्ञान का विशेषाधिकार "।

(जोर दिया गया)

उपरोक्त मामलों से यह स्पष्ट है कि एक व्यक्ति एक

सदन की सीमा के भीतर आपराधिक अपराध एक पूर्ण विशेषाधिकार नहीं रखता है। इसके बजाय, उसके पास एक योग्य विशेषाधिकार होगा, और उसे प्रतिरक्षा केवल तभी प्राप्त होगी जब कार्रवाई से संबंध हो। सदन में सदस्य की प्रभावी भागीदारी।

C. 2.2 भारत में स्थिति

33. संविधान के अनुच्छेद 105 (2) के तहत सांसदों को उपलब्ध छूट

"संबंध में किसी भी न्यायालय में किसी भी कार्यवाही" के दायित्व से संविधान

संसद में उनके द्वारा कही गई किसी भी बात या दिए गए किसी भी वोट का (विधायकों के मामले में संविधान के अनुच्छेद 194 (2) के समान) विषय (2021) 6 एस. सी. आर. बन गया।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

34. संविधान पीठ के फैसले को समझने के लिए शुरू में ही न्यायमूर्ति जी. एन. के फैसले पर ध्यान देना आवश्यक हो जाता है। रे। अपने फैसले के दौरान न्यायमूर्ति जी. एन. रे ने न्यायमूर्ति एस. सी. अग्रवाल के इस तर्क से सहमति व्यक्त की कि

एक सांसद धारा 2 (सी) के तहत एक लोक सेवक होता है।

(1)

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988; और

((ख)

चूँकि इसके लिए मंजूरी देने का कोई अधिकार नहीं है

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 198830 की धारा 19 (1) के तहत एक सांसद के खिलाफ अभियोजन, अदालत मंजूरी के अभाव में धारा 19 (1) में उल्लिखित अपराधों का संज्ञान ले सकती है। हालाँकि, आपराधिक अदालत में एक सांसद के खिलाफ धारा 7,10,11,12 और 15 के तहत दंडनीय अपराध के संबंध में आरोप पत्र दायर करने से पहले, अभियोजन एजेंसी

यथास्थिति, राज्यसभा के सभापति या लोकसभा अध्यक्ष की मंजूरी प्राप्त करनी होगी।

35. इसलिए, पहले पहलू पर, निर्णय के संदर्भ और पाठ को समझते समय, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि पी. सी. अधिनियम की धारा 19 (1) विशेष रूप से जनता पर मुकदमा चलाने के लिए मंजूरी को अनिवार्य करती है। सेवक, एक विवरण जिसे एक सांसद पूरा करता है। हालाँकि, संसद सदस्य के अभियोजन के लिए मंजूरी देने के लिए कोई सक्षम प्राधिकारी नहीं होने के कारण, न्यायमूर्ति एस. सी. अग्रवाल ने अपने और डॉ. न्यायमूर्ति ए. एस. आनंद के लिए बोलते हुए कहा किः

" 3. चूँकि संसद सदस्य को हटाने और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 19 (1) के तहत उसके अभियोजन के लिए मंजूरी देने के लिए कोई अधिकार सक्षम नहीं है, इसलिए अदालत मंजूरी के अभाव में धारा 19 (1) में उल्लिखित अपराधों का संज्ञान ले सकती है, लेकिन जब तक संसद द्वारा कानून में उपयुक्त संशोधन द्वारा उस संबंध में प्रावधान नहीं किया जाता है, तब तक अभियोजन एजेंसी,

दंडनीय अपराध के संबंध में आरोप पत्र दायर करने से पहले

30 " पी. सी. अधिनियम "केरल राज्य बनाम। के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

1988 के अधिनियम की धारा 7,10,11,13 और 15 के तहत संसद सदस्य के खिलाफ आपराधिक अदालत में राज्य सभा के सभापति/अध्यक्ष की अनुमति

लोकसभा, जैसा भी मामला हो "।

न्यायमूर्ति जी. एन. रे, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, उपरोक्त सूत्रीकरण से सहमत थे।

36. हालाँकि, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 105 (3) की व्याख्या से निपटने से पहले मामले के तथ्यात्मक संदर्भ की सराहना करना आवश्यक है। 26 जुलाई 1993 को श्री पी. वी. की अल्पमत सरकार के खिलाफ लोकसभा में अविश्वास प्रस्ताव पेश किया गया था।

नरसिम्हा राव अविश्वास प्रस्ताव को पराजित करने के लिए चौदह सदस्यों के समर्थन की आवश्यकता थी। 28 जुलाई 1993 को प्रस्ताव की मांग की गई थी। 251 सदस्यों ने प्रस्ताव के समर्थन में मतदान किया, जबकि 265 ने प्रस्ताव के खिलाफ मतदान किया। यह आरोप लगाया गया था कि कुछ सांसद सहमत हुए और कुछ अन्य सांसदों से रिश्वत ली। रिश्वत देने वालों और रिश्वत लेने वालों के खिलाफ मुकदमा चलाया गया और विशेष न्यायाधीश द्वारा संज्ञान लिया गया।

दिल्ली।

37. संविधान पीठ के समक्ष एक सवाल उठाया गया था कि

क्या उक्त सांसदों के खिलाफ कानूनी कार्यवाही को संविधान के अनुच्छेद 105 (3) के तहत किसी सांसद द्वारा "कुछ भी कहने या दिए गए किसी भी वोट के संबंध में" दिए गए विशेषाधिकारों और उन्मुक्ति के तहत संरक्षित किया जाएगा। अनुच्छेद 105 (3) की व्याख्या पर, न्यायमूर्ति एस. पी. भरुचा के अपने और न्यायमूर्ति राजेंद्र बाबू की ओर से बोलने वाले फैसले को न्यायमूर्ति जी. एन. रे की सहमति प्राप्त हुई। रिश्वत देने वालों, जो सांसद थे, के खिलाफ आरोप पीसी अधिनियम के तहत दंडनीय अपराधों के करने या उन अपराधों के लिए उकसाने के संबंध में था। न्यायमूर्ति एस. पी. भरुचा ने अपने फैसले के दौरान कहा कि अनुच्छेद 105 (2) एक सांसद की रक्षा करता है।

अदालत में कार्यवाही के खिलाफ "जो संसद में उसके द्वारा कही गई किसी भी बात या वोट से संबंधित है, या संबंधित है, या जिसका संबंध या संबंध है"। इस पहलू पर बहुमत के फैसले में कहा गयाः

" 136. विद्वान महान्यायवादी से इस बात से सहमत होना मुश्किल है कि हालांकि "के संबंध में" शब्दों को व्यापक रूप से स्वीकार किया जाना चाहिए।

अर्थात्, अनुच्छेद 105 (2) के तहत संरक्षण अदालती कार्यवाही तक सीमित है जो दिए गए भाषण या दिए गए या उत्पन्न होने वाले वोट को आक्षेपित करता है या जिससे संरक्षण का उद्देश्य पूरी तरह से संतुष्ट हो जाएगा। संरक्षण का उद्देश्य सदस्यों को संसद में अपने मन की बात कहने और उसी तरह से मतदान करने में सक्षम बनाना है, जो उस कारण से अदालत में जवाबदेह बनाए जाने के डर से मुक्त हो। यह पर्याप्त नहीं है कि सदस्यों को संरक्षित किया जाए [2021] 6 एस. सी. आर.

जिसका उनका भाषण या उनका वोट है। सदस्यों को सक्षम बनाने के लिए संसद की बहसों में निडरता से भाग लें, सदस्यगण

सभी नागरिक के खिलाफ प्रतिरक्षा की व्यापक सुरक्षा की आवश्यकता है और आपराधिक कार्यवाही जो उनके भाषण के साथ संबंध रखती है या

वोट करें। यही कारण है कि कोई सदस्य किसी के प्रति उत्तरदायी नहीं है।

किसी भी अदालत में किसी भी बात या किसी भी वोट के संबंध में कार्यवाही

उसके द्वारा दिया गया "। अनुच्छेद 105 (2) में यह नहीं कहा गया है कि उसके पास क्या होगा यदि

उन्होंने जो कहा है या उन्होंने कैसे मतदान किया है, उसके लिए उत्तरदायी हैं। आरोप लगाते हुए वर्तमान अभियोजन के लिए ऐसा कोई उद्देश्य नहीं है, यह मुश्किल नहीं है

एक ऐसे सदस्य की परिकल्पना करें जिसने भाषण दिया हो या मतदान किया हो जो

उन शक्तियों की पसंद के लिए नहीं जो एक से परेशान हो रही हैं अभियोजन पक्ष ने आरोप लगाया कि वह एक समझौते का पक्षकार था और

संसद में एक निश्चित परिणाम प्राप्त करने की साजिश और

रिश्वत दे दी "।

(जोर दिया गया)

38. जस्टिस एस. सी. अग्रवाल और डॉ. जस्टिस ए. एस. आनंद सुनवाई के लिए पहुंचे।

और इस विषय पर निष्कर्ष निकालनाः

" 98. उपरोक्त चर्चा के आधार पर हम इस पर पहुँचते हैं - निम्नलिखित निष्कर्षः

1. संसद सदस्य को अनुच्छेद के तहत छूट नहीं है। 105 (2) या संविधान के अनुच्छेद 105 (3) के तहत होने से

प्रस्ताव से जुड़े अपराध के लिए आपराधिक अदालत के समक्ष मुकदमा चलाया गया

या बोलने के उद्देश्य से या देने के लिए रिश्वत की स्वीकृति

संसद में या उसकी किसी समिति में उसका मतदान।

2. संसद सदस्य धारा 2 (सी) के तहत लोक सेवक होता है।

3. चूँकि किसी सदस्य को हटाने के लिए कोई सक्षम प्राधिकारी नहीं है संसद और धारा के तहत उसके अभियोजन के लिए मंजूरी देना।

19 (1) भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के तहत, अदालत कर सकती है

धारा 19 (1) में उल्लिखित अपराधों का संज्ञान लेना।

मंजूरी का अभाव लेकिन जब तक संसद द्वारा इसमें प्रावधान नहीं किया जाता है

कानून में उपयुक्त संशोधन द्वारा, अभियोजन एजेंसी,

दंडनीय अपराध के संबंध में आरोप पत्र दायर करने से पहले

केरल राज्य बनाम के खिलाफ 1988 के अधिनियम की धारा 7,10,11,13 और 15 के तहत।

के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

आपराधिक न्यायालय में संसद सदस्य, राज्य सभा के सभापति/राज्य सभा के अध्यक्ष की अनुमति प्राप्त करेगा।

लोकसभा, जैसा भी मामला हो "।

39. अनुच्छेद 105 (2) और अनुच्छेद 105 (3) के निर्माण पर न्यायमूर्ति एस. सी. अग्रवाल और डॉ. न्यायमूर्ति ए. एस. आनंद का विचार हालांकि अल्पमत का था क्योंकि न्यायमूर्ति जी. एन. रे ने निम्नलिखित के दृष्टिकोण से सहमति व्यक्त की थीः इस पहलू पर न्यायमूर्ति एस. पी. भरुचा और न्यायमूर्ति राजेंद्र बाबू। विश्लेषण करें।

न्यायमूर्ति एस. पी. भरुचा के निर्णय के नेतृत्व में बहुमत का निर्णय, विशिष्ट विशेषता यह हैः कथित रिश्वत लेने वालों के खिलाफ आरोप यह था कि वे एक आपराधिक साजिश में पक्षकार थे, जिसके अनुसरण में वे सदन में अविश्वास प्रस्ताव को विफल करने के लिए रिश्वत स्वीकार करने के लिए सहमत हुए थे। साजिश के अनुसरण में, यह आरोप लगाया गया था

कि रिश्वत देने वालों ने कथित रिश्वत लेने वालों को रिश्वत दी थी। इस संदर्भ में निर्णय में कहा गया थाः

" 134 ..... कथित साजिश और रिश्वत और अविश्वास प्रस्ताव के बीच सांठगांठ स्पष्ट है। आरोप यह है कि कथित रिश्वत लेने वालों को रिश्वत मिली थी ताकि नंबर की हार सुनिश्चित की जा सके।

विश्वास आंदोलन "।

40. इस प्रकार, न्यायालय ने कहा कि कथित साजिश, रिश्वत और अविश्वास प्रस्ताव के बीच संबंध स्पष्ट था, और इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि कथित रिश्वत लेने वालों को अविश्वास प्रस्ताव की हार सुनिश्चित करने के लिए अपने वोटों में हेरफेर करने के लिए रिश्वत मिली थी। इस संदर्भ में न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद 105 (2) के तहत "के संबंध में" अभिव्यक्ति का व्यापक अर्थ होना चाहिए और कथित साजिश और रिश्वत का उन मतों के संबंध में संबंध था और था और आपराधिक कार्यवाही में प्रस्तावित जांच अविश्वास प्रस्ताव में उनके मतों के संबंध में थी। 41. अगला निर्णय जो कानून के इस निकाय के विकास में महत्वपूर्ण है, राजा राम में संविधान पीठ का निर्णय है।

पाल बनाम माननीय अध्यक्ष, लोकसभा 3 1. मामला सामने आ गया है "पूछताछ के लिए नकद" के रूप में लोकप्रिय कथा में, जहां एक निजी चैनल पर एक स्टिंग ऑपरेशन में कुछ सांसदों को सदन में सवाल उठाने के लिए प्रत्यक्ष रूप से या बिचौलियों के माध्यम से पैसे स्वीकार करते हुए दिखाया गया था। इसी तरह, एक अन्य चैनल ने एमपीलैड्स योजना के कार्यान्वयन के संबंध में एक सांसद के अनुचित आचरण का आरोप लगाते हुए एक प्रसारण किया। सदन की समितियों द्वारा जांच के बाद, ये सांसद थे

31 (2007) 3 एससीसी 184।

निष्कासित कर दिया। इसके कारण रिट याचिकाओं की स्थापना को चुनौती दी गई निष्कासन। उस संदर्भ में, जो मुद्दे निर्धारण के लिए थे वे थेः

" 1. क्या इस न्यायालय के पास, संवैधानिक योजना के भीतर, है

शक्तियों, विशेषाधिकारों की विषय-वस्तु और दायरा तय करने का अधिकार क्षेत्र

और विधानमंडलों और उनके सदस्यों की उन्मुक्ति?

2. यदि पहले प्रश्न का उत्तर सकारात्मक में दिया जाए, तो क्या यह हो सकता है?

यह पाया गया कि भारत में विधानमंडलों की शक्तियाँ और विशेषाधिकार,

विशेष रूप से अनुच्छेद 105 के संदर्भ में, की शक्ति शामिल है

उनके सदस्यों का निष्कासन?

3. निष्कासन की ऐसी शक्ति मिलने की स्थिति में, क्या यह

न्यायालय के पास उक्त के प्रयोग में हस्तक्षेप करने का अधिकार क्षेत्र है

संसद और उसके सदस्यों को प्रदत्त शक्ति या विशेषाधिकार या

समितियाँ और, यदि ऐसा है, तो क्या यह अधिकार क्षेत्र कुछ द्वारा सीमित है

सीमाएँ? "

मुख्य न्यायाधीश वाई. के. सभरवाल बहुमत के लिए बोल रहे हैं (न्यायमूर्ति सी.

के. ठाकर ने सहमति व्यक्त करते हुए कहा किः

" 62. संविधान द्वारा कानून के उपरोक्त स्पष्ट उच्चारण को ध्यान में रखते हुए इस न्यायालय की पीठों को एक के बाद एक मामले में, कोई नहीं होना चाहिए

संदेह छोड़ दिया कि जब भी संसद, या उस मामले के लिए कोई भी राज्य

विधानमंडल, प्रावधानों के संदर्भ में किसी भी शक्ति या विशेषाधिकार का दावा करता है अनुच्छेद 105 (3) या अनुच्छेद 194 (3) में निहित, जैसा भी मामला हो,

यह वह न्यायालय है जिसके पास अधिकार और अधिकार क्षेत्र है

जाँच करने के लिए, उसके सामने शिकायत लाए जाने पर, पता लगाने के लिए

यदि विशेष शक्ति या विशेषाधिकार का दावा किया गया है

उक्त संवैधानिक प्रावधानों द्वारा या, सरल शब्दों में कहें तो, यदि - ऐसी शक्ति या विशेषाधिकार था जिसे कहा जा सकता है

संसद के हाउस ऑफ कॉमन्स में निहित

शुरू होने की तारीख को यूनाइटेड किंगडम

भारत का संविधान ताकि भारतीय के लिए उपलब्ध हो सके

विधायिकाएँ "।

(जोर दिया गया)

42. वह सिद्धांत जो इस निर्णय से दृढ़ता से उभरता है

यह है कि जब भी अनुच्छेद 105 (3) या अनुच्छेद 194 (3) के संदर्भ में विशेषाधिकार या प्रतिरक्षा का दावा किया जाता है, तो न्यायालय को यह निर्धारित करने का अधिकार और अधिकार क्षेत्र सौंपा जाता है कि क्या दावा संवैधानिक प्रावधान के आधार पर टिकाऊ है। संविधान पीठ ने केरल राज्य बनाम को अभिनिर्धारित किया।

के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

कि न तो संसद और न ही भारत में राज्य विधानसभाएं "स्व-संरचना या दूसरे शब्दों में अपने स्वयं के संविधान को विनियमित करने की शक्ति का दावा कर सकती हैं, जिस तरह से हाउस ऑफ कॉमन्स या यूके द्वारा दावा किया गया है।" इसलिए यह निर्णय भारत में संवैधानिक सर्वोच्चता के सिद्धांत पर जोर देता है जो ब्रिटेन में संसदीय सर्वोच्चता से अलग है।

43. इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने एक विशिष्टता जताई है

याचिकाकर्ता, लोकायुक्ता, न्यायमूर्ति रिपुसुदन दयाल (सेवानिवृत्त) (उपरोक्त) ने निर्माण कार्य से संबंधित भ्रष्टाचार में लिप्त होने के लिए राज्य विधानसभा के कुछ अधिकारियों के खिलाफ कार्रवाई शुरू की और अधिकारियों के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही शुरू की। बदले में, सदन के अध्यक्ष ने याचिकाकर्ता को विशेषाधिकार हनन का आरोप लगाते हुए एक पत्र जारी किया, जिसके खिलाफ याचिकाकर्ता ने इस अदालत के समक्ष एक रिट याचिका दायर की। याचिका को स्वीकार करते हुए, मुख्य न्यायाधीश पी. सतशिवम ने तीन-न्यायाधीशों की पीठ की ओर से बोलते हुए कहा कि विशेषाधिकार केवल तभी उपलब्ध हैं जब वे सदस्यों के लिए अपने विधायी कार्यों को करने के लिए आवश्यक हैं। उनका मानना था कि विशेषाधिकारों का दायरा उनकी आवश्यकता के आधार पर निर्धारित किया जाना चाहिए।

न्यायालय ने टिप्पणी कीः

" 51. प्राप्त विशेषाधिकारों का दायरा इस पर निर्भर करता है -

विशेषाधिकारों की आवश्यकता अर्थात उन्हें क्यों प्रदान किया गया है

के लिए। द्वारा प्राप्त विशेषाधिकारों के लिए मूल आधार

सदस्यों को उन्हें अपने कार्यों को करने की अनुमति देनी है

सदस्यों के कार्य में कोई बाधा नहीं आती है

घर को। दसवीं लोकसभा की विशेषाधिकार समिति,

संहिताकरण, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैंः .....[...]
52. यह स्पष्ट है कि मूल अवधारणा यह है कि विशेषाधिकार

क्या वे अधिकार हैं जिनके बिना सदन कार्य नहीं कर सकता है

इसके विधायी कार्य। वे सदस्यों को छूट नहीं देते हैं।

किसी भी कानून के तहत उनके दायित्वों से जो जारी है

उन पर किसी भी अन्य कानून की तरह लागू होता है जो सामान्य पर लागू होता है। नागरिक। इस प्रकार, किसी आरोप की जाँच या जाँच

विधायी कार्यों में हस्तक्षेप करने के लिए नहीं कहा जा सकता है सभा। किसी को भी अपराधी के खिलाफ कोई विशेषाधिकार नहीं है।

अभियोजन "।

(जोर दिया गया)

44. उपरोक्त कानून की स्थिति को विस्तृत करने के बाद, अगला खंड प्रतिरक्षा का आह्वान करने वाले तर्क की वैधता पर चर्चा करेगा और

वर्तमान मामले में सार्वजनिक संपत्ति के विनाश के कृत्यों के लिए कानूनी कार्यवाही को रोकने के लिए एक परिकल्पना के रूप में अनुच्छेद 194 के तहत विशेषाधिकार।

सी. 3 सार्वजनिक विनाश के कार्य करने का विशेषाधिकार-एक असंगत प्रस्ताव 45. इस मामले का सार यह है कि क्या लोक अभियोजक द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 के तहत किया गया आवेदन इसके दायरे में आता है।

सी. आर. पी. सी. की धारा 321 की व्याख्यात्मक समझ जैसा कि स्पष्ट किया गया है

इस न्यायालय के निर्णयों द्वारा। सीजेएम ने कहा कि आवेदन की अनुमति नहीं दी जा सकती है और उच्च न्यायालय ने अपने पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए सीजेएम के निष्कर्ष की पुष्टि की। संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए इस कार्य को पूरा करने के लिए न्यायालय को उस सावधानी को ध्यान में रखना चाहिए जो संविधान पीठ के निर्णय में बहुमत के निर्णय में व्यक्त की गई है।

शीओनानंदन पासवान (ऊपर)। न्यायालय ने कहा कि यह "इस न्यायालय की घोषित नीति रही है कि इस तरह के मामले के तथ्यों और साक्ष्यों की बारी-बारी से जांच शुरू नहीं की जाए", विशेष रूप से क्योंकि

गुण या तथ्यों और साक्ष्य पर अवलोकन मुकदमे में पक्षों के लिए गंभीर पूर्वाग्रह पैदा करेगा। इसलिए, वकील की प्रस्तुतियों से संपर्क करने में, एक सावधानी और चेतावनी के साथ शुरू करना आवश्यक है कि उनका मूल्यांकन करते समय

न्यायालय को अनुच्छेद 136 के तहत अपनी अधिकारिता की सीमाओं को पार नहीं करना चाहिए। सीजेएम और उच्च न्यायालय दोनों इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि धारा 321 के तहत लोक अभियोजक द्वारा वापस लेने के लिए आवेदन की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। मुद्दा यह है कि क्या ये निष्कर्ष एक स्पष्ट त्रुटि या विकृति से ग्रस्त हैं जो इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप की गारंटी देगा।

46. हमें शुरुआत में अपीलार्थियों द्वारा उठाए गए दो आधारों को स्पष्ट करना चाहिए। सबसे पहले, उच्च न्यायालय ने अपने फैसले के दौरान इसका हवाला दिया है

मुख्य न्यायाधीश भगवती की अल्पमत राय में टिप्पणियों को न्यायालय का दृष्टिकोण मानते हुए शिवानंदन पासवान (ऊपर) में। निस्संदेह, विद्वान मुख्य न्यायाधीश का निर्णय व्यक्त करता है कि

अल्पमत की राय। बहुमत का दृष्टिकोण न्यायमूर्ति वी खालिद (अपने और न्यायमूर्ति एस नटराजन के लिए बोलते हुए) के फैसले और न्यायमूर्ति ई एस वेंकटरमैया की सहमति वाली राय में परिलक्षित होता है। हालाँकि, इससे पहले कि हम इस मामले में उच्च न्यायालय के फैसले को स्थानांतरित करने के लिए अपीलकर्ताओं के निवेदन को स्वीकार करें, हमें इस बात का विज्ञापन करना चाहिए कि क्या यह शिवानंदन पासवान (ऊपर) में बहुमत के फैसले के अनुरूप है।

इसलिए, सी. जे. एम. के निर्णय की पुष्टि करने के लिए उच्च न्यायालय के निष्कर्ष का कानून के चश्मे से विश्लेषण किया जाना चाहिए क्योंकि यह संविधान पीठ के फैसले से पहले और बाद में कई फैसलों में और निश्चित रूप से, शिवानंदन पासवान (ऊपर) में निर्णय में लगातार स्पष्ट किया गया है। दूसरा पहलू जो ध्यान में रखा जाना चाहिए वह यह है कि उच्च न्यायालय ने इस तथ्य को स्वीकार कर लिया है कि वापस लेने के लिए आवेदन को किसी भी दुर्भावना के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है। हम विचार करेंगे कि क्या यह एक है

ऐसी परिस्थिति जिसके परिणामस्वरूप धारा 321 के तहत अभियोजन वापस लेने की अनुमति देने के लिए आवेदन को अनुमति दी जानी चाहिए थी। मामले के इस पहलू पर मुद्दा यह है कि क्या एक निष्कर्ष कि सद्भावना का कोई अभाव नहीं है, के परिणामस्वरूप धारा 321 के तहत एक आवेदन को अन्य विचारों से रहित रूप से अनुमति दी जानी चाहिए जो इस तरह के निर्णय को आधार बनाना चाहिए। 47. विवरण से परे, अभियुक्तों के खिलाफ आरोपों को फिर से दर्ज करने की आवश्यकता है। मार्च 2015 में भौतिक समय पर, प्रतिवादी-अभियुक्त राज्य विधान सभा के निर्वाचित सदस्य थे

विपक्ष में पार्टी। 13 मार्च 2015 को, जब वित्त मंत्री

दीपक और एक बिजली के पैनल से रु. 2,20,093 का नुकसान हुआ। इस घटना के बाद, राज्य विधानसभा के विधान सचिव के कहने पर दंडनीय अपराधों के लिए 2015 का अपराध संख्या 236 दर्ज किया गया था। आई. पी. सी. की धारा 34 के साथ पठित धारा 42732 और 44733 और सार्वजनिक संपत्ति क्षति निवारण अधिनियम 1984 की धारा 3 (1) के तहत। सीआरपीसी की धारा 173 के तहत एक अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी

सी. जे. एम. द्वारा पुलिस और संज्ञान लिया गया।

48. सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान की रोकथाम अधिनियम 1984 संसद द्वारा "सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान की रोकथाम और उससे जुड़े मामलों के लिए" अधिनियमित किया गया था। धारा 2 (बी) परिभाषित करती है कि

अभिव्यक्ति 'सार्वजनिक संपत्ति' इस प्रकार हैः

32 " 427. पचास रुपये की राशि को नुकसान पहुँचाने वाली शरारत। जो कोई भी शरारत करता है और इस तरह पचास रुपये या उससे अधिक की राशि को नुकसान या क्षति पहुंचाता है, उसे दोनों में से किसी एक के कारावास से दंडित किया जाएगा जो दो साल तक बढ़ सकता है, या जुर्माना, या दोनों से दंडित किया जाएगा। 33 " 447. आपराधिक अतिक्रमण के लिए सजा। जो कोई आपराधिक अतिचार करता है, उसे किसी भी प्रकार के कारावास से दंडित किया जाएगा जो तीन महीने तक बढ़ सकता है, या जुर्माने से जो पांच सौ रुपये तक बढ़ सकता है, या दोनों से दंडित किया जाएगा।

" (ख) "सार्वजनिक संपत्ति" से कोई भी संपत्ति, चाहे वह अचल हो, अभिप्रेत है। या चल (किसी भी मशीनरी सहित) जिसका स्वामित्व है, या

का अधिकार, या नियंत्रण में

((i) केंद्र सरकार; या

((iii) कोई स्थानीय प्राधिकरण; या (iv) केंद्रीय, प्रांतीय या राज्य अधिनियम द्वारा या उसके तहत स्थापित कोई निगम; या (v) कंपनी अधिनियम की धारा 617 में परिभाषित कोई भी कंपनी,

1956 (1 1956 का); या

((vi) कोई भी संस्था, संस्था या उपक्रम जो

सरकार, आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, निर्दिष्ट कर सकती है

इस संबंध में:

इस उपखंड के तहत संस्था, संस्था या उपक्रम जब तक कि ऐसी संस्था, संस्था या उपक्रम को पूरी तरह से वित्तपोषित नहीं किया जाता है या काफी हद तक केंद्र सरकार या एक या अधिक राज्य सरकारों द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रदान की गई निधियों द्वारा, या आंशिक रूप से

केंद्र सरकार और आंशिक रूप से एक या अधिक राज्यों द्वारा

सरकारें "।

उद्देश्यों और कारणों के विवरण में अध्यादेश के लिए तर्क है जिसे राष्ट्रपति द्वारा इस विषय पर प्रख्यापित किया गया था, जिसे एक क़ानून के रूप में अधिनियमित किया गया था:

“ दंगों के दौरान होने वाले विनाश और क्षति सहित सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान और तोड़फोड़ के कृत्यों पर अंकुश लगाने के उद्देश्य से और सार्वजनिक हंगामा, कानून को मजबूत करने की आवश्यकता महसूस की गई ताकि अधिकारी सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान के मामलों से प्रभावी ढंग से निपट सकें। तदनुसार, राष्ट्रपति ने 28 जनवरी, 1984 को सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान की रोकथाम अध्यादेश, 1984 (1984 का संख्या 3) जारी किया।

धारा 3 जो वर्तमान मामले में लागू की गई है, में है

पंखों की शर्तें:

" 3. सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुँचाने वाली शरारत।

(1) जो कोई भी किसी के संबंध में कोई भी कार्य करके शरारत करता है उप-धारा (2) में निर्दिष्ट प्रकृति की सार्वजनिक संपत्ति के अलावा अन्य सार्वजनिक संपत्ति को कारावास से दंडित किया जाएगा।

कार्यकाल जो पांच साल तक बढ़ सकता है और जुर्माने के साथ।

केरल राज्य v. के. अजीत और ओआरएस।

[डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

(2) जो कोई भी किसी के संबंध में कोई भी कार्य करके शरारत करता है

सार्वजनिक संपत्ति होना

(क) संबंध में उपयोग की जाने वाली कोई इमारत, स्थापना या अन्य संपत्ति।

जल, प्रकाश, बिजली के उत्पादन, वितरण या आपूर्ति के साथ या

ऊर्जा;

(ख) कोई भी तेल प्रतिष्ठान;

(ग) कोई भी सीवेज कार्य;

((घ) कोई खदान या कारखाना;

(ङ) सार्वजनिक परिवहन या दूर संचार का कोई साधन,

या इस संबंध में उपयोग की जाने वाली कोई इमारत, स्थापना या अन्य संपत्ति

इसके साथ, एक अवधि के लिए कठोर कारावास से दंडित किया जाएगा।

पाँच साल और जुर्माने के साथः
बशर्ते कि न्यायालय अपने न्यायालय में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए

निर्णय, कम अवधि के लिए कारावास की सजा प्रदान करें

छह महीने से अधिक।

"शरारत" अभिव्यक्ति को धारा 2 (ए) में परिभाषित किया गया है जिसका अर्थ आई. पी. सी. की धारा 42534 में दिया गया हैः 34 " 425. शरारत। जो कोई भी जनता या किसी व्यक्ति को गलत तरीके से नुकसान पहुँचाने या नुकसान पहुँचाने के इरादे से, या यह जानते हुए कि वह जनता या किसी व्यक्ति को नुकसान पहुँचाने की संभावना रखता है, किसी भी संपत्ति के विनाश का कारण बनता है, या किसी संपत्ति में या उसकी स्थिति में ऐसा कोई परिवर्तन करता है जो उसके मूल्य या उपयोगिता को नष्ट या कम करता है, या उसे हानिकारक रूप से प्रभावित करता है, वह "शरारत" करता है। स्पष्टीकरण 1. शरारत के अपराध के लिए यह आवश्यक नहीं है कि अपराधी को घायल या नष्ट की गई संपत्ति के मालिक को नुकसान या नुकसान पहुँचाने का इरादा होना चाहिए। यह पर्याप्त है यदि वह किसी संपत्ति को नुकसान पहुँचाने का इरादा रखता है, या जानता है कि वह किसी भी संपत्ति को नुकसान पहुँचाकर किसी भी व्यक्ति को गलत नुकसान या क्षति पहुँचाने की संभावना रखता है, चाहे वह उस व्यक्ति की हो या नहीं।

स्पष्टीकरण 2. - शरारत उस व्यक्ति की संपत्ति को प्रभावित करने वाले कार्य द्वारा की जा सकती है जो कार्य करता है, या उस व्यक्ति और अन्य लोगों को संयुक्त रूप से।

(ख) ए, जेड से संबंधित एक बर्फ के घर में पानी डालता है और इस तरह जेड को गलत तरीके से नुकसान पहुंचाने के इरादे से बर्फ पिघल जाता है। ए ने शरारत की है। (ग) एक स्वेच्छा से जेड से संबंधित एक अंगूठी को नदी में फेंक देता है, जिससे जेड को गलत नुकसान होता है। ए ने शरारत की है।

(घ) ए, यह जानते हुए कि उसका प्रभाव निष्पादन में लिया जाने वाला है ताकि वह जेड को देय ऋण को पूरा कर सके, उन प्रभावों को नष्ट कर देता है, जिससे जेड को ऋण की संतुष्टि प्राप्त करने से रोका जा सके, और इस तरह जेड को नुकसान हो सके। ए ने शरारत की है।

21] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

" (क) "शरारत" का वही अर्थ होगा जो धारा 425 में है।

भारतीय दंड संहिता (1860 का 45);

धारा 425 के तत्व इस प्रकार हैं:

((i)

(क) किसी संपत्ति को नष्ट करने के इरादे से

कारण; या (बी) गलत कारण बनने की संभावना के बारे में जानना

जनता या किसी व्यक्ति को नुकसान या क्षति; या

संपत्ति या उसकी स्थिति में कोई परिवर्तन जो नष्ट कर देता है।

((ख)

या इसके मूल्य या उपयोगिता को कम करता है या इसे हानिकारक रूप से प्रभावित करता है।

49. सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान की रोकथाम अधिनियम 1984

सार्वजनिक संपत्ति के संबंध में कोई भी कार्य करके शरारत करने (आई. पी. सी. की धारा 425 में परिभाषित) को दंडित करना। उप. धारा 3 की धारा (1) अपराध को पाँच साल तक के कारावास और जुर्माने से दंडनीय बनाती है। उप-धारा (2) में कुछ विशिष्ट प्रतिष्ठान शामिल हैं जिनके मामले में शरारत के कार्य में न्यूनतम छह महीने के कारावास की अवधि होती है, लेकिन जो पांच साल तक बढ़ सकती है और जुर्माना हो सकता है। धारा 535 में जमानत के लिए एक विशेष प्रावधान है। धारा 636 यह स्पष्ट करती है कि कानून वर्तमान में लागू किसी अन्य कानून के अतिरिक्त है और उसका अपमान नहीं करता है।

50. जनता को नष्ट करने वाले अपराध की गंभीरता

इस न्यायालय द्वारा संपत्ति पर पुनः विचार किया गया थाः सार्वजनिक और निजी संपत्तियों का विनाश 37, जहां इसे ठीक करने के लिए स्वतः संज्ञान लिया गया

(च) ए एक जहाज को फेंकने का कारण बनता है, जिससे जेड को नुकसान पहुँचाने का इरादा होता है जिसने जहाज पर तल पर पैसे उधार दिए हैं। ए ने शरारत की है। (छ) ए, जो घोड़े में जेड के साथ संयुक्त संपत्ति रखता है, घोड़े को गोली मार देता है, जिससे जेड को गलत नुकसान होता है। ए ने शरारत की है।

(ज) ए Z से संबंधित एक खेत में मवेशियों को प्रवेश करने का कारण बनता है, यह जानने के इरादे से कि वह Z की फसल को नुकसान पहुंचा सकता है। ए ने शरारत की है। 35 " 5. जमानत के संबंध में

विशेष प्रावधान। - धारा 3 या धारा 4 के तहत दंडनीय अपराध के लिए अभियुक्त या दोषी ठहराए गए किसी भी व्यक्ति को, यदि हिरासत में है, तो जमानत पर या अपने स्वयं के मुचलके पर रिहा नहीं किया जाएगा, जब तक कि अभियोजन पक्ष को इसका विरोध करने का अवसर नहीं दिया गया है।

इस तरह की रिहाई के लिए आवेदन "। 36 " 6. बचत हो रही है। इस अधिनियम के प्रावधान उस समय लागू किसी अन्य कानून के प्रावधानों के अतिरिक्त होंगे और उनका अपमान नहीं करेंगे, और इस अधिनियम में निहित कुछ भी किसी भी व्यक्ति को किसी भी कार्यवाही (चाहे वह जांच के माध्यम से हो या अन्यथा) से छूट नहीं देगा जो इस अधिनियम के अलावा उसके खिलाफ शुरू की जा सकती है या ली जा सकती है। ” 37 2009 5 एससीसी 212।

केरल राज्य v. के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

बंद, हड़ताल और 'विरोध' के अन्य रूप। अदालत ने न्यायमूर्ति के. टी. थॉमस (इस अदालत के पूर्व न्यायाधीश) और वरिष्ठ वकील श्री फली एस. नरीमन की अध्यक्षता में दो समितियों का गठन किया और जांच के लिए विशिष्ट दिशानिर्देश निर्धारित करने में दोनों समितियों की सिफारिशों को अपनाया। और सार्वजनिक संपत्ति के विनाश से जुड़े अपराधों का अभियोजन, क्षति का आकलन और संपत्ति के विनाश से जुड़े मामलों में मुआवजे का निर्धारण। कोडुंगल्लूर फिल्म सोसाइटी और एक अन्य बनाम भारत संघ 3 8 के हाल के फैसले में, इस न्यायालय ने नोट किया कि पुनः में दिशानिर्देशः भारत संघ द्वारा सार्वजनिक और निजी संपत्तियों के विनाश (उपरोक्त) पर विचार किया गया है और सिफारिशों की तर्ज पर विधायी परिवर्तन शुरू करने के लिए एक मसौदा विधेयक विचाराधीन है। अदालत ने भीड़ की हिंसा पर अंकुश लगाने, मुआवजे का निर्धारण करने और अपराधों के लिए दायित्व तय करने और ऐसे अपराधों की जांच के लिए पुलिस अधिकारियों की जिम्मेदारी के संबंध में निवारक उपायों पर भी दिशा-निर्देश जारी किए।

51. उपरोक्त के आधार पर, यह स्पष्ट है कि इस न्यायालय और संसद दोनों में बढ़ती मान्यता और आम सहमति रही है कि

विधान सभा। किसी भी अन्य नागरिक की तरह, वे आपराधिक कानून द्वारा निर्धारित वैध व्यवहार की सीमाओं के अधीन हैं। निर्वाचित विधानमंडल का कोई भी सदस्य किसी विशेषाधिकार या विशेषाधिकार का दावा नहीं कर सकता है। आपराधिक कानून के प्रतिबंधों से ऊपर खड़े होने की प्रतिरक्षा, जो सभी नागरिकों पर समान रूप से लागू होती है। 1984 के अधिनियम का उद्देश्य और उद्देश्य दंगों और सार्वजनिक विरोध प्रदर्शनों के दौरान हुए विनाश और क्षति सहित (लेकिन इन्हीं तक सीमित नहीं) सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान और बर्बरता के कृत्यों पर अंकुश लगाना था।

53. विपक्ष सहित विधायिका के एक सदस्य के पास एक

विधानमंडल के पटल पर विरोध करने का अधिकार। ऐसा करने का अधिकार संसद में इसके अनुप्रयोग में अनुच्छेद 105 (1) और राज्य विधानमंडलों में इसके अनुप्रयोग में अनुच्छेद 194 (1) में निहित है। इन दोनों के पहले खंड अनुच्छेदों में एक जनादेश है कि "बोलने की स्वतंत्रता होगी"

38 2018 10 एससीसी 713।

संसद और प्रत्येक राज्य के विधानमंडल में। फिर भी, बोलने की स्वतंत्रता जो पहले खंड द्वारा संरक्षित है, संविधान के प्रावधानों और विधायिका की प्रक्रिया को विनियमित करने वाले नियमों और स्थायी आदेशों के अधीन है। दूसरा खंड विधायिका या किसी समिति में "कुछ भी कहा गया या कोई वोट दिया गया" के संबंध में "किसी भी अदालत में किसी भी कार्यवाही के लिए" दायित्व के खिलाफ प्रतिरक्षा प्रदान करता है। इसके अलावा, संसद या राज्य विधानमंडल के सदन द्वारा या उसके अधिकार के तहत किसी भी रिपोर्ट, पेपर के प्रकाशन के संबंध में कोई भी व्यक्ति उत्तरदायी नहीं होगा।

वोट या कार्यवाही। हम पहले अनुच्छेद 194 के खंड (3) के इतिहास का पता लगा चुके हैं क्योंकि यह मूल रूप से था जिसके तहत शक्तियां, विशेषाधिकार थे। और संसद और राज्य विधानमंडलों के सदस्यों की उन्मुक्ति वे थीं जिन्हें लागू करने से तुरंत पहले हाउस ऑफ कॉमन्स के सदस्यों के लिए मान्यता दी गई थी

54. हाउस ऑफ कॉमन्स के सदस्यों द्वारा प्राप्त विशेषाधिकारों और उन्मुक्ति के इतिहास का पता लगाते हुए, एर्स्किन मे ने यूके में स्थिति को विभिन्न चरणों में विभाजित किया है। हालाँकि, हाउस ऑफ कॉमन्स के सदस्यों के विशेषाधिकारों और उन्मुक्ति से जो विशिष्ट विशेषता सामने आती है, वह है आपराधिक कानून के अनुप्रयोग से उन्मुक्ति का अभाव। यह न्यायशास्त्रीय विकास सर जॉन इलियट (ऊपर) में शुरू हुआ, ब्रैडलॉफ (ऊपर) में न्यायमूर्ति स्टीफन द्वारा विकसित किया गया था, और चैटर (ऊपर) में यूके सुप्रीम कोर्ट द्वारा सीमेंट किया गया था।

55. इस पद के लिए एक वैध तर्क है। इसका उद्देश्य

विधायिका के निर्वाचित सदस्यों को विशेषाधिकार और उन्मुक्ति प्रदान करना उन्हें बिना किसी बाधा, भय या पक्षपात के अपने कार्यों को करने में सक्षम बनाना है। इस पर तीन न्यायाधीशों की पीठ ने जोर दिया है।

लोकायुक्ता, न्यायमूर्ति रिपुसूदन दयाल (ऊपर)। संसद और राज्य विधानमंडल के सदस्यों को जिस पद की शपथ लेनी होती है, उसके लिए उन्हें (i) कानून द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्चा विश्वास और निष्ठा रखने की आवश्यकता होती है; (ii) भारत की संप्रभुता और अखंडता को बनाए रखना; और (iii) उस कर्तव्य का ईमानदारी से निर्वहन करना जिस पर वे प्रवेश करने वाले हैं। यह एक ऐसा वातावरण बनाने के लिए है जिसमें वे अपने कार्यों को स्वतंत्र रूप से कर सकें और अपने कर्तव्यों का निर्वहन कर सकें

संविधान विशेषाधिकारों और उन्मुक्ति को मान्यता देता है।

इन विशेषाधिकारों पर केरल राज्य बनाम लागू होता है। के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

एक विधायक के कार्यों के निर्वहन के लिए एक कार्यात्मक संबंध। वे स्थिति की निशानी नहीं हैं जो विधायकों को असमान आधार पर खड़ा करती हैं। यह महत्वपूर्ण है कि यद्यपि अनुच्छेद 19 (1) (ए) प्रत्येक नागरिक को विरासत में मिलने वाले बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार को स्पष्ट रूप से मान्यता देता है, अनुच्छेद 105 (1) और 194 (1) दोनों इस बात पर जोर देते हैं कि संसद और राज्य के विधानमंडल में "बोलने की स्वतंत्रता होगी"। संक्षेप में, अनुच्छेद 19 (1) (ए) सभी नागरिकों में निहित भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के व्यक्तिगत अधिकार को मान्यता देता है। अनुच्छेद 105 (1) और 194 (1) संसद और राज्य विधानमंडलों में बोलने की स्वतंत्रता के बारे में बात करते हैं और उस संदर्भ में अनिवार्य रूप से निम्नलिखित को शामिल करना चाहिएः

एक ऐसे वातावरण का निर्माण जिसमें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का प्रयोग उनके दायरे में किया जा सके। यह मान्यता कि संसद और राज्य विधानमंडलों में बोलने की स्वतंत्रता होगी, उन स्थितियों के अस्तित्व को सुनिश्चित करने की आवश्यकता को रेखांकित करती है जिनमें निर्वाचित प्रतिनिधि प्रदर्शन कर सकते हैं।

उनके कर्तव्य और कार्य प्रभावी ढंग से। वे कर्तव्य और कार्य उतने ही कर्तव्य और विश्वास का विषय हैं जितना कि वे लोगों द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों को विरासत में मिलने वाले अधिकार के हैं। हम लकड़ी को याद करते हैं यदि हम निर्वाचित जन प्रतिनिधियों पर डाले गए संबंधित कर्तव्यों के बिना अधिकारों पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

56. विशेषाधिकार और उन्मुक्ति देश के सामान्य कानून से छूट का दावा करने के लिए प्रवेश द्वार नहीं हैं, विशेष रूप से इस मामले में, आपराधिक कानून जो प्रत्येक नागरिक की कार्रवाई को नियंत्रित करता है। आपराधिक कानून के आवेदन से छूट का दावा करना उस विश्वास के साथ विश्वासघात करना होगा जो निर्माताओं के रूप में निर्वाचित प्रतिनिधियों के चरित्र पर प्रभावित होता है।

और कानून के प्रवर्तक। पूरा आधार जिस पर आवेदन किया जाता है

धारा 321 के तहत वापस लेने के लिए लोक अभियोजक द्वारा प्रस्ताव दिया गया था जो अनुच्छेद 194 में निहित संवैधानिक प्रावधानों की एक मौलिक गलत धारणा पर आधारित है। ऐसा प्रतीत होता है कि लोक अभियोजक विशेषाधिकारों और उन्मुक्तिओं के अस्तित्व से प्रभावित था जो अभियोजन के रास्ते में खड़े होंगे। इस तरह की समझ संवैधानिक प्रावधान के साथ विश्वासघात करती है और इस गलत धारणा पर आगे बढ़ती है कि विधायिका के निर्वाचित सदस्य आपराधिक कानून के सामान्य अनुप्रयोग से ऊपर हैं।

57. अपीलकर्ताओं द्वारा पी. वी. नरसिम्हा राव (उपरोक्त) पर यह तर्क देने के लिए भरोसा किया गया कि सदन के अंदर प्रतिवादी-अभियुक्त की कार्रवाई 'विरोध' का एक रूप था जो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ एक करीबी संबंध रखता है, और इस प्रकार अनुच्छेद 194 (2) के अंतर्गत आता है। पी. वी. नरसिम्हा राव (ऊपर) में बहुमत ने 'के संबंध में' वाक्यांश की व्याख्या से निपटा और इसे व्यापक महत्व दिया। उसी समय,

विशेषाधिकारों की सामग्री की पहचान। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि सदस्यों को केवल ऐसे विशेषाधिकार प्राप्त होंगे जो उनके विधायी कार्यों को करने के लिए आवश्यक हैं। इसके खिलाफ अपना विरोध दर्ज कराने के लिए सदस्यों द्वारा सदन के भीतर सार्वजनिक संपत्ति को नष्ट करने का एक कथित कार्य बजट की प्रस्तुति को उनके विधायी कार्यों के प्रयोग के लिए आवश्यक नहीं माना जा सकता है। सदस्यों के कार्य संवैधानिक साधनों की सीमा को पार कर गए हैं और इस प्रकार संविधान के तहत गारंटीकृत विशेषाधिकारों के दायरे में नहीं आते हैं।

प्रयोग किया गया या कि यह अवैध कारणों या उद्देश्यों के लिए न्याय के सामान्य पाठ्यक्रम में हस्तक्षेप करने का प्रयास नहीं है। न्यायालय अपनी सहमति देगा यदि यह संतुष्ट हो जाता है कि यह न्याय के प्रशासन की सेवा करता है और इसकी मांग करने का उद्देश्य न्याय की पुष्टि के लिए बाहरी नहीं है। कानून। यह सार्वजनिक न्याय के व्यापक उद्देश्य हैं जो निर्णय का मार्गदर्शन करते हैं। लोक अभियोजक स्वतंत्र रूप से कार्य करने के लिए कर्तव्यबद्ध है और यह सुनिश्चित करता है कि उन्होंने अपने दिमाग को आवश्यक उद्देश्य के लिए लागू किया है जो शक्तियों के प्रयोग को नियंत्रित करता है। क्या लोक अभियोजक ने नेक इरादे से काम किया है, यह अपने आप में इस मुद्दे के बारे में नहीं है कि सहमति दी जानी चाहिए या नहीं। यह श्योनंदन पासवान (ऊपर) के फैसले से स्पष्ट है। फैसले के पैराग्राफ 73 में जस्टिस वी. खालिद ने कहा है कि

विशेष रूप से कहा गया कि अदालत को इस बात की जांच करनी चाहिए कि क्या आवेदन सद्भावना से, सार्वजनिक नीति और न्याय के हित में किया गया है और न कि कानून की प्रक्रिया को विफल करने या रोकने के लिए। सद्भावना एक है और एकमात्र विचार नहीं है। अदालत को यह भी जांचना चाहिए कि क्या कोई आवेदन ऐसी अनियमितताओं या अवैधताओं से ग्रस्त है जो सहमति दिए जाने पर प्रकट अन्याय का कारण बनती है।

केरल राज्य v. के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

59. इन सिद्धांतों की कसौटी पर, कोई तरीका नहीं हो सकता है

इस बात पर संदेह है कि सी. जे. एम. ने धारा 321 के तहत अभियोजन वापस लेने के लिए सहमति देने से इनकार कर दिया था। जिन कृत्यों की शिकायत आई. पी. सी. की धारा 425,427 और 447 के तहत और सार्वजनिक संपत्ति क्षति निवारण अधिनियम 1984 की धारा 3 (1) के तहत दंडनीय अपराध होने का आरोप है, वे वर्तमान मामले में राज्य विधानमंडल के पटल पर किए गए हैं। सार्वजनिक संपत्ति के विनाश के कृत्यों को विधायिका में बोलने की स्वतंत्रता या विपक्ष के सदस्यों के लिए वैध रूप से उपलब्ध विरोध के रूपों के साथ नहीं जोड़ा जा सकता है। इन आरोपों के बावजूद अभियोजन को वापस लेने की अनुमति देना, जिसके संबंध में जांच के बाद सीआरपीसी की धारा 173 के तहत एक अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की गई है और संज्ञान लिया गया है, अवैध कारणों से न्याय के सामान्य पाठ्यक्रम में हस्तक्षेप के बराबर होगा। इस तरह की कार्रवाई स्पष्ट रूप से उस कानून के समर्थन के लिए बाहरी है जिसके लिए कार्यपालिका के सभी अंग बाध्य हैं। इसलिए, उच्च न्यायालय का केवल यह निष्कर्ष कि

सद्भावना की अनुपस्थिति के परिणामस्वरूप सार्वजनिक न्याय के कारण और सार्वजनिक जीवन में ईमानदारी का पालन करने की आवश्यकता की अनदेखी करके आवेदन को एक आवश्यक परिणाम के रूप में अनुमति नहीं दी जाएगी। निर्वाचित प्रतिनिधियों के रूप में राज्य विधानमंडल के सदस्यों के चरित्र में एक सार्वजनिक विश्वास होता है जो उनके कर्तव्यों के निर्वहन से प्रभावित होता है। अनुमति दें

अभियोजन वापस लेने का परिणाम केवल एक एकल परिणाम होगा, जो यह है कि निर्वाचित प्रतिनिधियों को जनादेश से छूट दी गई है

आपराधिक कानून। इसे सार्वजनिक न्याय के व्यापक उद्देश्यों की सहायता के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। 60. अब हम अपीलार्थियों और प्रतिवादी-अभियुक्त द्वारा उठाए गए दो अन्य तर्कों पर विचार करेंगेः सबसे पहले, क्या इसकी मंजूरी

विधानसभा के भीतर होने वाली घटनाओं के लिए विधायकों पर मुकदमा चलाने के लिए सदन के अध्यक्ष की आवश्यकता होती है और दूसरा, क्या सदस्य अनुच्छेद 194 (2) के तहत विशेषाधिकार द्वारा संरक्षित हैं जो सदन के अंदर होने वाली कार्यवाही के प्रकाशन के मामले में उपलब्ध है।

C. 4 अध्यक्ष की मंजूरी

61. विधानसभा के अध्यक्ष की नियुक्ति संविधान के अनुच्छेद 178 के तहत की जाती है। अध्यक्ष सदन का पीठासीन अधिकारी होता है और उसे सदन के कामकाज और सदन की गरिमा बनाए रखने के बारे में निर्णय लेने की पूरी स्वायत्तता होती है। [2021] 6 एस. सी. आर. में प्रक्रिया और व्यवसाय के संचालन के नियमों का अध्याय IV

केरल विधानसभा 39 में कहा गया है कि अध्यक्ष सदन की अध्यक्षता करते हैं, सदन की बैठकों और स्थगन पर निर्णय लेते हैं, और सदन के कामकाज के सुचारू संचालन के लिए व्यवस्था करते हैं।

घर।

62. अपीलकर्ताओं ने पी. वी. नरसिम्हा राव (ऊपर) पर भरोसा किया है।

धारा 7,10,11,13 और 15 के तहत सेवक को केवल लोक सेवक को हटाने के लिए सक्षम प्राधिकारी की पूर्व मंजूरी के साथ लिया जा सकता है। कार्यालय 40 से। इस धारा के आलोक में, पी. वी. नरसिम्हा राव (उपरोक्त) में बहुमत (न्यायमूर्ति एस. सी. अग्रवाल ने अपनी ओर से बोलते हुए और न्यायमूर्ति ए. एस. आनंद ने न्यायमूर्ति जी. एन. रे के साथ इस बिंदु पर सहमति व्यक्त की) ने कहा कि चूंकि सांसद लोक सेवक हैं, इसलिए उनके खिलाफ मुकदमा शुरू करने के लिए पूर्व मंजूरी की आवश्यकता है। न्यायालय ने यह भी माना कि चूंकि कोई नहीं है

एक सांसद को हटाने के लिए सक्षम प्राधिकारी, एक सांसद पर मुकदमा चलाने की मंजूरी देने की शक्ति सदन के अध्यक्ष के पास होगी। द.

पूर्व मंजूरी के संबंध में संविधान पीठ की टिप्पणियाँ थीं

पी. सी. अधिनियम की धारा 19 के विशिष्ट संदर्भ के साथ किया गया है और कानून के एक व्यापक प्रस्ताव को इंगित करने के लिए नहीं माना जा सकता है कि किसी भी अपराध के लिए केरल विधानसभा के इस मामले में सदन के सदस्यों के खिलाफ मुकदमा शुरू करने के लिए मंजूरी एक पूर्व आवश्यकता है।

सदन के भीतर प्रतिबद्ध। वास्तव में, यह तर्क पी. वी. नरसिम्हा राव (ऊपर) में संविधान पीठ के समक्ष उठाया गया था, लेकिन इसे खारिज कर दिया गया था। के. वीरास्वामी बनाम यूनियन ऑफ इंडिया में निर्णय पर भरोसा करते हुए यह तर्क दिया गया था।

39 " केरल विधानसभा नियम "। 40 0 " 19. (1) कोई भी अदालत धारा 7,10,11,13 और 15 के तहत दंडनीय अपराध का संज्ञान नहीं लेगी, जो एक लोक सेवक द्वारा कथित रूप से किया गया है।

(क) ऐसे व्यक्ति के मामले में जो संघ के मामलों के संबंध में कार्यरत है और उस सरकार की केंद्र सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा अपने पद से हटाने योग्य नहीं है; (ख) ऐसे व्यक्ति के मामले में जो किसी राज्य के मामलों के संबंध में कार्यरत है और उस सरकार की राज्य सरकार द्वारा या उसकी मंजूरी के अलावा अपने पद से हटाने योग्य नहीं है; (ग) किसी अन्य व्यक्ति के मामले में, उसे अपने पद से हटाने के लिए सक्षम प्राधिकारी। केरल राज्य v.

के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

भारत ", 1 कि किसी के खिलाफ कोई आपराधिक कार्यवाही शुरू नहीं की जा सकती है

अध्यक्ष की मंजूरी प्राप्त किए बिना विधायक। वीरास्वामी (ऊपर) में, अपीलार्थी मद्रास उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश थे जब उन पर भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1947 के तहत आपराधिक कदाचार का आरोप लगाया गया था। यह निर्धारित किया गया था कि जब तक भारत के मुख्य न्यायाधीश से परामर्श नहीं किया जाता है, तब तक उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश के खिलाफ आपराधिक मामला दर्ज नहीं किया जा सकता है। न्यायमूर्ति शेट्टी (अपने और न्यायमूर्ति वेंकटचलैया के लिए) ने इस प्रकार टिप्पणी की:

" 60 ..... दूसरा, मुख्य न्यायाधीश न्यायपालिका का प्रमुख होता है। मुख्य रूप से अखंडता और निष्पक्षता से संबंधित है

न्यायपालिका। अतः यह आवश्यक है कि भारत के मुख्य न्यायाधीश

विचार किए गए किसी आपराधिक मामले की तस्वीर से बाहर नहीं रखा गया

एक न्यायाधीश के खिलाफ। वह अपनी राय देने के लिए बेहतर स्थिति में होगा।

मामले में और भारत के मुख्य न्यायाधीश के साथ परामर्श

सरकार को आने में अपार सहायता की जाए

सही निष्कर्ष। इसलिए हम निर्देश देते हैं कि कोई आपराधिक मामला न हो

न्यायाधीश के खिलाफ दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 के तहत मामला दर्ज किया जाएगा।

उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश या उच्च न्यायालय के न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय जब तक कि भारत का मुख्य न्यायाधीश नहीं है

इस मामले में सलाह ली। उचित सम्मान दिया जाना चाहिए

यदि भारत का मुख्य न्यायाधीश स्वयं वह व्यक्ति है जिसके खिलाफ सरकार पर आपराधिक कदाचार के आरोप लगे हैं

उच्चतम न्यायालय के किसी अन्य न्यायाधीश या न्यायाधीशों से परामर्श करेगा। जाँच के चरण में इसी तरह का परामर्श होगा।

यह आवश्यक और उचित होगा कि मंजूरी का प्रश्न प्रमुख की सलाह के अनुसार और उसके अनुसार निर्देशित किया जाए

भारत का न्याय। तदनुसार निर्देश दिए जाएँगे

सभी संबंधितों की आशंका है कि अधिनियम का दुरुपयोग होने की संभावना है कार्यपालिका द्वारा संपार्श्विक उद्देश्य के लिए "।

(जोर दिया गया)

पी. वी. नरसिम्हा राव (ऊपर) मामले में अदालत ने एक सांसद के खिलाफ स्थापित आपराधिक आरोप का उदाहरण 41 (1991) 3 एससीसी 655।

21] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

न्यायपालिका के एक सदस्य के खिलाफ। इसने अभिनिर्धारित किया कि यह महत्वपूर्ण है कि न्यायपालिका की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए एक न्यायाधीश के खिलाफ शिकायत शुरू करने से पहले भारत के मुख्य न्यायाधीश की मंजूरी की आवश्यकता है, और एक सांसद की स्थिति एक न्यायाधीश के पद के समान नहीं हैः

" 176. श्री द्वारा की गई प्रस्तुति पर ध्यान देना अब सुविधाजनक है।

सिब्बल वीरास्वामी मामले पर आधारित [(1991) 3 एस. सी. सी. 655: 1991

एस. सी. सी. (सी. आर. आई) 734: (1991) 3 एससीआर 189]। उन्होंने आग्रह किया कि इस तरह

अदालत ने वहां निर्देश दिया था कि कोई आपराधिक मुकदमा नहीं चलाया जाना चाहिए उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के खिलाफ शुरू किया गया

पहले भारत के मुख्य न्यायाधीश से परामर्श किए बिना, इसलिए हमें करना चाहिए

निर्देश दें कि एक के खिलाफ कोई आपराधिक अभियोजन शुरू नहीं किया जाना चाहिए

अध्यक्ष से पहले परामर्श किए बिना संसद सदस्य। के रूप में

बहुमत का निर्णय स्पष्ट करता है, यह निर्देश था

स्वतंत्रता को सुरक्षित करने के लिए आवश्यक माना जाता है

न्यायपालिका और इस आशंका के आलोक में कि

सबसे बड़ा वादी होने के नाते कार्यपालक के दुरुपयोग करने की संभावना है न्यायाधीशों पर मुकदमा चलाने की शक्ति "। संसद के सदस्य

एक तुलनीय स्थिति में खड़े न हों। उन्हें ऐसा करने की आवश्यकता नहीं है

नागरिक और नागरिक के बीच दिन-ब-दिन होने वाले विवादों का निपटारा करना। कार्यकारी। उन्हें अतिरिक्त सुरक्षा की आवश्यकता नहीं है

न्यायाधीशों को अपने संवैधानिक कर्तव्य का पालन करने की आवश्यकता होती है

निर्णय लेना-बिना किसी डर या पक्षपात के।

(जोर दिया गया)

63. उपरोक्त चर्चा से यह स्पष्ट है कि इसका निर्णय

पी. वी. नरसिम्हा राव (ऊपर) में न्यायालय का समर्थन नहीं करता है

अपीलार्थियों का तर्क कि अध्यक्ष की मंजूरी प्राप्त की जानी चाहिए थी। अपीलकर्ताओं ने सदन के भीतर किए गए अपराधों के लिए विधायकों/सांसदों पर मुकदमा चलाने के लिए अध्यक्ष की पूर्व मंजूरी की आवश्यकता के लिए अपने निवेदन के समर्थन में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (1) पर भरोसा किया है। सी. आर. पी. सी. की धारा 197 (1) में कहा गया है कि किसी लोक सेवक द्वारा कथित रूप से किए गए अपराध के लिए संज्ञान नहीं लिया जा सकता है, जिसे सरकार की मंजूरी से हटाया जा सकता है, जब तक कि सरकार की मंजूरी प्राप्त न हो जाए। प्रावधान इस प्रकार हैः

" 197. न्यायाधीशों और लोक सेवकों का अभियोजनः

(1) जब कोई व्यक्ति जो न्यायाधीश या मजिस्ट्रेट है या था या

लोक सेवक द्वारा या उसके साथ छोड़कर अपने कार्यालय से हटाने योग्य नहीं है सरकार की मंजूरी पर किसी भी अपराध का आरोप है।

केराला v के राज्य का कार्य करते हुए या उसका उद्देश्य बताते हुए उसके द्वारा किए जाने का आरोप।

के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

अपने आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में कार्य करने के लिए, कोई भी न्यायालय नहीं लेगा

पूर्ववर्ती अपराध को छोड़कर ऐसे अपराध का संज्ञान सजा-"।

(जोर दिया गया)

64. सी. आर. पी. सी. की धारा 197 का एक सादा पाठ स्पष्ट करता है कि

यह केवल तभी लागू होता है जब लोक सेवक को उनके द्वारा या उनके साथ पद से हटाया जा सकता है

सरकार की मंजूरी। हालाँकि, विधायकों को सरकार की मंजूरी से नहीं हटाया जा सकता है, क्योंकि वे भारत के लोगों के निर्वाचित प्रतिनिधि हैं। उदाहरण के लिए उन्हें पद से हटाया जा सकता है, जब उन्हें संविधान की दसवीं अनुसूची के तहत अयोग्य ठहराया जाता है, जिसके लिए सरकार की मंजूरी की आवश्यकता नहीं होती है। इसके अलावा, धारा 197 के तहत मंजूरी की आवश्यकता केवल अदालत द्वारा संज्ञान लेने से पहले होती है, न कि अभियोजन शुरू करने के लिए।

65. अपीलकर्ताओं ने सतीश चंद्र बनाम अध्यक्ष पर भरोसा किया है।

लोकसभा 2 यह आग्रह करने के लिए कि सदन को नियंत्रित करने और विनियमित करने की अध्यक्ष की शक्तियों में विधानसभा के सदस्यों के खिलाफ कार्यवाही शुरू करने के लिए मंजूरी की शक्ति शामिल है। हम पाते हैं कि उक्ति

सतीश चन्द्र (ऊपर) भी अपीलार्थियों की सहायता के लिए नहीं आता है। सतीश चंद्र (उपरोक्त) मामले में, संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत इस न्यायालय के समक्ष एक याचिका दायर की गई थी, जिसमें लोकसभा अध्यक्ष और राज्यसभा के सभापति को सदन को बाधित करने वाले सांसदों के वेतन, अनुलाभ और विशेषाधिकारों के भुगतान को रोकने का निर्देश देने की मांग की गई थी और पी. सी. अधिनियम के तहत उन पर मुकदमा चलाने के लिए यदि वे उनका लाभ उठाना जारी रखते हैं। जिन राहतों की मांग की गई थी, उनमें सदन की सदस्यता से उनकी अयोग्यता और भविष्य में चुनाव लड़ने पर रोक शामिल थी। प्रार्थना यह थी कि

अनिवार्य रूप से सदन के अध्यक्ष को कार्यवाही के संचालन के तरीके के बारे में निर्देश देना। यह इस संदर्भ में था कि इस अदालत की दो न्यायाधीशों की पीठ जिसमें मुख्य न्यायाधीश पी. सतशिवम और न्यायमूर्ति रंजना पी.

देसाई ने रामदास अठावले (5) बनाम भारत संघ 43 पर भरोसा करते हुए याचिका को खारिज कर दिया, जहां यह आयोजित किया गया थाः

और पाठ्यक्रम को नियंत्रित और विनियमित करने की शक्ति के साथ निवेश किया जाता है बहस करना और व्यवस्था बनाए रखना।

रामदास अठावले (ऊपर) में, विचार के लिए प्रश्न था

क्या अध्यक्ष का बैठक को फिर से शुरू करने का निर्णय

सदन की न्यायिक समीक्षा की जा सकती है। इसलिए, दोनों रामदास में

42 (2014) 2 एससीसी 178। 43 (2010) 4 एससीसी 1.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

अठावले (ऊपर) और सतीश चंद्र (ऊपर), न्यायालय के सामने सदन के अध्यक्ष की कार्रवाइयों की न्यायिक समीक्षा का सवाल था। दोनों ही मामलों में न्यायालय ने समीक्षा करने की अपनी शक्ति को सीमित कर दिया ताकि अनुच्छेद 122 (2) के अनुसरण में सदन के सामान्य कामकाज और संचालन में हस्तक्षेप न किया जा सके, जिसमें कहा गया है कि कार्यवाही और कार्य संचालन को विनियमित करने की अध्यक्ष की शक्ति अंतिम और बाध्यकारी है। हालाँकि, यह तर्क देना एक विस्तार होगा कि न्यायालय की ये टिप्पणियां अध्यक्ष को यह तय करने के लिए एक कार्टे ब्लैंच प्रदान करती हैं कि क्या और कब विधायकों के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही शुरू की जानी चाहिए। केरल राज्य ने, महाराष्ट्र राज्य के विपरीत, विधायक के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही शुरू करने के लिए अध्यक्ष की मंजूरी के लिए सीआरपीसी के प्रासंगिक प्रावधानों में संशोधन नहीं किया है। दंड प्रक्रिया संहिता

(महाराष्ट्र संशोधन) अधिनियम, 2015 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 156 और 190 में संशोधन करते हुए अधिनियमित किया गया था। संशोधित प्रावधानों में कहा गया है कि कोई भी मजिस्ट्रेट जांच का आदेश नहीं दे सकता है और कथित अपराध के लिए संज्ञान नहीं ले सकता है।

किसी भी व्यक्ति द्वारा किया गया है जो एक सार्वजनिक सेवक है या था,

‘ मंजूरी देने वाले प्राधिकारी की पूर्व मंजूरी के बिना अपने आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में कार्य करते हुए या कार्य करने का इरादा रखते हुए। इसके अलावा, ऐसे मामले में भी मंजूरी आवश्यक है जब अधिनियम आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन में कार्य कर रहा था या कार्य करने का इरादा रखता था। जब अध्यक्ष की मंजूरी की गारंटी देने वाला कोई प्रावधान-या तो अपराध के लिए विशिष्ट (जैसे पीसी अधिनियम) या वर्ग के लिए विशिष्ट (जैसे महाराष्ट्र संशोधन अधिनियम, 2015) अधिनियमित नहीं किया जाता है, तो अपीलार्थी का तर्क नाजुक आधारों पर खड़ा होता है। उपर्युक्त कारणों से, यह तर्क कि प्रतिवादी-अभियुक्त के खिलाफ अभियोजन अध्यक्ष की मंजूरी के अभाव में दूषित किया जाता है, खारिज कर दिया जाता है।

सी. 5 वीडियो के विशेषाधिकार और अस्वीकार्य होने का दावा करना

66. अपीलार्थियों के वरिष्ठ वकील श्री रंजीत कुमार ने अपनी दलीलों के दौरान एक वीडियो रिकॉर्डिंग का उल्लेख किया। 13 मार्च 2015 को हुई घटना। वीडियो द्वारा प्राप्त किया गया था

सदन के इलेक्ट्रॉनिक नियंत्रण कक्ष से जाँच अधिकारी। वीडियो रिकॉर्डिंग में लोक अभियोजक द्वारा दायर वापसी याचिका में भी उल्लेख मिलता है, जिसमें अभियोजक का कहना है कि वीडियो फुटेज सदन के अध्यक्ष की सहमति के बिना प्राप्त किया गया था और इस प्रकार भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 की धारा 65 बी के तहत प्रमाणन का अभाव है। इस संबंध में श्री रंजीत कुमार ने दो अलग-अलग दलीलें दी हैं, जिन पर हमें विचार करने की आवश्यकता है:

घटना सदन के फर्श पर हुई, और एक है

((i)

' सदन की कार्यवाही। अनुच्छेद 194 (2) के अनुसार, किसी भी सदस्य के खिलाफ कोई कानूनी कार्यवाही शुरू नहीं की जा सकती है।

सदन द्वारा या उसके प्राधिकार के अधीन किसी प्रतिवेदन, पत्र, मत या कार्यवाही के प्रकाशन के संबंध में। इसके आधार पर, घटना को रिकॉर्ड करने वाला वीडियो सदन की कार्यवाही का प्रकाशन है और किसी भी विधायक का सामना नहीं किया जा सकता है इन कार्यवाहियों के लिए कानूनी कार्रवाई; और

((ख)

घटना की वीडियो रिकॉर्डिंग सदन की है

और वीडियो फुटेज की एक प्रति अध्यक्ष की मंजूरी के बिना प्राप्त नहीं की जा सकती थी, जो सदन के संरक्षक हैं। इसके अलावा, वीडियो रिकॉर्डिंग में भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 की धारा 65 बी के तहत प्रमाणन का भी अभाव है। वीडियो रिकॉर्डिंग के बिना, प्रतिवादी-अभियुक्त के खिलाफ मुकदमे में सफल होने के लिए अभियोजन पक्ष के पास अपर्याप्त सबूत उपलब्ध हैं। यह आग्रह किया जाता है कि इसके आलोक में, इस मामले के अभियोजन को वापस लिया जाए।

67. हम इन प्रस्तुतियों में से प्रत्येक पर बारी-बारी से विचार करेंगे।

C. 5.1 सदन की कार्यवाही के प्रकाशन से छूट

68. संविधान के अनुच्छेद 194 (1) में प्रावधान है कि प्रत्येक राज्य के विधानमंडल में बोलने की स्वतंत्रता होगी। अनुच्छेद का खंड 2

194 , विशेष रूप से यह प्रावधान है कि राज्य विधानमंडल का कोई भी सदस्य विधानमंडल या उसकी किसी समिति में अपने द्वारा कही गई किसी भी बात या दिए गए किसी भी वोट के संबंध में किसी भी कानूनी कार्यवाही के लिए उत्तरदायी नहीं होगा, और कोई भी व्यक्ति ऐसे विधानमंडल के किसी सदन द्वारा या उसके अधिकार के तहत किसी भी रिपोर्ट, पेपर, वोट या कार्यवाही के प्रकाशन के संबंध में ऐसा उत्तरदायी नहीं होगा। श्री रंजीत कुमार ने यह दावा करने के लिए अनुच्छेद 194 (2) के दूसरे अंग का सहारा लेने की मांग की है कि घटना के लिए प्रतिवादी-अभियुक्त के खिलाफ कानूनी कार्यवाही प्रतिबंधित है, क्योंकि यह कथित रूप से सदन की 'कार्यवाही' का हिस्सा है, जिसे प्राधिकरण के तहत प्रकाशित किया गया था।

घर से।

69. अनुच्छेद 194 (2) के दूसरे अंग को लागू करने के लिए, निम्नलिखित तीन तत्व मौजूद होने चाहिए- पहला, एक

प्रकाशन; दूसरा, प्रकाशन सदन द्वारा या उसके अधिकार के तहत होना चाहिए; और तीसरा, प्रकाशन एक रिपोर्ट, पेपर, वोट से संबंधित होना चाहिए।

या कार्यवाही।

70. इस संबंध में संबोधित किया जाने वाला पहला प्रश्न संविधान के अनुच्छेद 194 (2) के तहत 'प्रकाशन' वाक्यांश का अर्थ है। ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी 'प्रकाशन' शब्द को "एक पुस्तक, एक पत्रिका आदि को छापने और इसे जनता के लिए उपलब्ध कराने" के रूप में परिभाषित करती है। इस प्रकार, आम बोलचाल में, प्रकाशन प्रिंट मीडिया को संदर्भित करता है। उस समय

संविधान के अधिनियमन, संविधान सभा के सदस्यों ने प्रसारण की संभावना की कल्पना नहीं की होगी प्रौद्योगिकी की सहायता से सदन की कार्यवाही जो वर्तमान में मौजूद है। संविधान सभा में संविधान को अपनाने तक की चर्चाओं और बहसों को टाइप किए गए प्रारूप में दर्ज किया गया और प्रकाशित किया गया। संविधान सभा (विधायी) प्रक्रिया और कार्य संचालन के नियमों के अनुरूप, जो संविधान के अंगीकार होने तक लागू थे, लोकसभा और राज्यसभा ने भी प्रक्रिया और कार्य संचालन के नियमों को अपनाया। लोकसभा नियमों के नियम 379 में लिखा है कि महासचिव सदन की कार्यवाही की पूरी रिपोर्ट तैयार करेगा और इसे इस रूप में प्रकाशित करेगा और

जिस तरह से अध्यक्ष निर्देश देता है। केरल विधान सभा सहित विभिन्न राज्य विधानमंडलों द्वारा इसी तरह के नियमों को अपनाया गया है।

केरल विधानसभा के नियमों को अपनाया गया। केरल विधानसभा नियमों का नियम 376 लोकसभा नियमों के नियम 379 के समान है। इस प्रकार, जब संविधान अधिनियमित किया गया था, तो 'प्रकाशन' वाक्यांश का अर्थ मुद्रित प्रारूप में कार्यवाही का प्रकाशन था। 71. प्रौद्योगिकी के आगमन के साथ, संसद और विधान सभा की कार्यवाही को सार्वजनिक दर्शकों के लिए प्रसारित किया जाता है।

विधायी निकाय में बहसों की पहुंच को बढ़ावा देना।

तदनुसार, केंद्र और राज्य सरकारों ने विधायी कार्यवाहियों के प्रसारण के क्षेत्र को विनियमित करने के लिए कानून बनाया और निर्देश जारी किए। 1977 में, संसदीय कार्यवाही (के संरक्षण)

प्रकाशन) अधिनियम, 19774 अधिनियमित किया गया था। अधिनियम की धारा 3 में कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति सदन की कार्यवाही के समाचार पत्र में पर्याप्त रूप से सही प्रकाशन के लिए किसी भी दीवानी या आपराधिक कार्यवाही के लिए उत्तरदायी नहीं होगा, जब तक कि प्रकाशन सार्वजनिक भलाई के लिए न हो। अधिनियम की धारा 4 ने इन कार्यवाहियों के प्रसारण को सुरक्षा प्रदान की। इसके बाद, अनुच्छेद 361 ए को शामिल करने के लिए संविधान (44 वां) संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा संविधान में संशोधन किया गया। अनुच्छेद 361 ए 1977 के अधिनियम में प्रदान किए गए संरक्षण को बढ़ाता है। अनुच्छेद 361 ए इस प्रकार है:

44 " 1977 अधिनियम "द स्टेट ऑफ केराला बनाम। के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

और राज्य विधानमंडल। — (1) कोई भी व्यक्ति किसी के लिए उत्तरदायी नहीं होगा। के संबंध में किसी भी न्यायालय में दीवानी या आपराधिक कार्यवाही

किसी समाचार पत्र में किसी के बारे में काफी हद तक सही रिपोर्ट का प्रकाशन

संसद या विधानमंडल के किसी भी सदन की कार्यवाही

दुर्भावना के साथः बशर्ते कि इस खंड में कुछ भी लागू नहीं होगा की गुप्त बैठक की कार्यवाही की किसी भी रिपोर्ट का प्रकाशन

संसद के सदन या विधान सभा, या, के रूप में

मामला किसी राज्य के विधानमंडल का कोई भी सदन हो सकता है।

(2) खंड (1) प्रतिवेदनों या मामलों के संबंध में लागू होगा।

किसी भी के हिस्से के रूप में वायरलेस टेलीग्राफी के माध्यम से प्रसारण प्रसारण के माध्यम से प्रदान किया जाने वाला कार्यक्रम या सेवा

रिपोर्ट या मामलों के संबंध में जो लागू होता है

एक समाचार पत्र में प्रकाशित।

स्पष्टीकरण। इस लेख में "समाचार पत्र" में एक समाचार एजेंसी शामिल है।

एक समाचार पत्र में प्रकाशन के लिए सामग्री वाली रिपोर्ट।

(जोर दिया गया)

मई 2002 में केरल विधानसभा ने निर्देश जारी किए।

राज्यपाल के अभिभाषण और विधानसभा के प्रसारण और प्रसारण पर केरल विधानसभा नियमों के नियम 246 के अनुसार कार्यवाही 45। इस प्रकार, हालांकि कार्यवाही के प्रसारण की शुरुआत में कल्पना नहीं की गई थी

'प्रकाशन' शब्द का अर्थ, 'प्रकाशन' शब्द का अर्थ समकालीन बोलचाल में विकसित हुआ है। कार्यवाही का प्रसारण भी प्रकाशन का एक रूप है, हालांकि प्रिंट के रूप में नहीं, जो मुद्रित प्रारूप में प्रकाशन के रूप में जनता को जानकारी देने के समान उद्देश्य को पूरा करता है।

72. अब हम अनुच्छेद 194 (2) के दूसरे घटक की ओर मुड़ते हैं, जो

यह है कि क्या कथित कार्यवाही सदन द्वारा या उसके अधिकार के तहत प्रकाशित की गई थी। घटना की वीडियो रिकॉर्डिंग इलेक्ट्रॉनिक नियंत्रण कक्ष से जब्त की गई थी। विभिन्न स्थानीय और राष्ट्रीय समाचार

चैनलों ने उसी दिन 13 मार्च 2015 की घटना के अंशों का प्रसारण किया। 2002 के निर्देश रिकॉर्डिंग के लिए अध्यक्ष की पूर्व अनुमति प्राप्त करने के बाद कार्यवाही के प्रसारण की अनुमति देते हैं। इसलिए, यदि कार्यवाही को दर्ज करने की अनुमति है 45 " 2002 निर्देश "[2021] 6 एस. सी. आर.

समाचार चैनलों को प्रदान किया जाता है, तो प्रसारण आमतौर पर 'सदन के अधिकार के तहत' एक प्रकाशन होता है। हालांकि, 2002 के निर्देशों का खंड 7 किसी भी व्यवधान को दर्ज करने की अनुमति देने से इनकार करता है।

पते के दौरान अव्यवस्था। खंड 7 में कहा गया हैः

" 7. कैमरों को पते के दौरान किसी भी रुकावट/विकार को रिकॉर्ड नहीं करना चाहिए या बाहर नहीं जाना चाहिए। ऐसी किसी भी घटना के मामले में कैमरों को केवल गणमान्य व्यक्ति पर केंद्रित किया जाएगा।

निर्धारित शर्तों का उल्लंघन करने वाली कोई भी रिकॉर्डिंग 'सदन के अधिकार के तहत' रिकॉर्डिंग नहीं है। जब ऐसी घटना की रिकॉर्डिंग स्वयं प्राधिकरण के बिना होती है, तो इसके प्रकाशन/प्रसारण को भी सदन का कोई अधिकार नहीं होगा। इस प्रकार, हालांकि स्थानीय और राष्ट्रीय समाचार चैनलों में प्रसारित घटना की वीडियो रिकॉर्डिंग 'प्रकाशन' शब्द के दायरे में आएगी, लेकिन इसे रिकॉर्ड करने का सदन का अधिकार नहीं था, और इस प्रकार सदस्यों को छूट नहीं दी जा सकती है। 73. इसके अलावा यह भी उल्लेखनीय है कि वीडियो रिकॉर्डिंग जो इलेक्ट्रॉनिक नियंत्रण कक्ष से प्राप्त की गई थी

सभा स्थानीय या स्थानीय स्तर पर घटना के प्रसारण की प्रति नहीं है। राष्ट्रीय टेलीविजन लेकिन विधानसभा के आंतरिक रिकॉर्ड का एक हिस्सा था। इस प्रकार, घटना के संग्रहीत वीडियो फुटेज को प्रसारित नहीं किया गया था, या दूसरे शब्दों में, जनता को प्रसारित करने के लिए प्रकाशित नहीं किया गया था। चूँकि यह सदन का "प्रकाशन" नहीं था, इसलिए इसे संविधान के अनुच्छेद 194 (2) के तहत प्रतिरक्षा का संरक्षण प्राप्त नहीं है।

74. यद्यपि अपीलार्थियों के तर्क को इस स्तर पर अस्वीकार किया जा सकता है, हम तीसरे घटक से निपटना आवश्यक पाते हैं जो है -

क्या 13 मार्च 2015 को हुई घटना अनुच्छेद 194 (2) के तहत एक 'कार्यवाही' थी, इस प्रकार अपीलार्थियों को पूर्ण प्रतिरक्षा प्रदान की गई।

75. एर्स्किन मे 'संसदीय कार्यवाही' वाक्यांश को परिभाषित करते हैं।

इस प्रकार हैः

" एक तकनीकी संसदीय शब्द के रूप में कार्यवाही का प्राथमिक अर्थ, जो कम से कम सत्रहवीं शताब्दी की शुरुआत में था, कुछ औपचारिक कार्रवाई है, आमतौर पर एक निर्णय, जो सदन द्वारा लिया जाता है।

अपनी सामूहिक क्षमता में। जबकि कार्य जिसमें सदन के कार्य और निर्णय शामिल हैं, स्पष्ट रूप से कार्यवाही हैं, बहस एक है
उस प्रक्रिया का आंतरिक भाग जिसे केरल राज्य v द्वारा मान्यता प्राप्त है।

के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

अनुच्छेद IX के निर्माण में समावेश। एक व्यक्ति

सदस्य आमतौर पर भाषण द्वारा कार्यवाही में भाग लेता है, लेकिन

औपचारिक कार्रवाई के विभिन्न मान्यता प्राप्त रूपों द्वारा भी, जैसे कि

मतदान करना, प्रस्ताव की सूचना देना या याचिका प्रस्तुत करना

या एक समिति से रिपोर्ट, इस तरह के कार्यों में से अधिकांश समय है

बोलने के लिए विकल्प बचाएँ "46

(जोर दिया गया)

76. सीलोन के महान्यायवादी बनाम डी लिवर 1 7, धारा 14

प्रिवी काउंसिल की न्यायिक समिति के समक्ष सीलोन के रिश्वत अधिनियम (जैसा कि श्रीलंका को तब कहा जाता था) पर सवाल उठाया गया था। धारा 14 में कहा गया है कि प्रतिनिधि सभा के किसी सदस्य को 'ऐसे सदस्य के रूप में अपनी क्षमता में' कोई भी कार्य करने या करने से रोकने के लिए प्रलोभन या पुरस्कार एक अपराध है। अपनी क्षमता में वाक्यांश की व्याख्या करते हुए

ऐसे सदस्य के रूप में, विस्काउंट रैडक्लिफ ने अधिकार विधेयक 1689 के अनुच्छेद 9 का उल्लेख किया जो संसदीय विशेषाधिकार प्रदान करता है। फैसले में कहा गया हैः

सदन के सदस्य और पूरक के विशेषाधिकार का सवाल यह है कि 'संसद में कार्यवाही' क्या है? यह बात नहीं है

बोर्ड के सामने अब वही सवाल है, और कोई नहीं है संदेह है कि शब्दों की कार्यवाही का उचित अर्थ

संसद में 'उस संदर्भ से प्रभावित है जिसमें वे

अधिकार विधेयक के अनुच्छेद 9 में दिखाई देता है; लेकिन जवाब दिया गया है

कि कुछ अधिक सीमित प्रश्न एक बहुत ही समान पर निर्भर करता है

किन परिस्थितियों में और किन स्थितियों में विचार करें

सदन का कोई सदस्य है जो अपने 'वास्तविक' या 'आवश्यक' का प्रयोग कर रहा है

सदस्य के रूप में कार्य करना? के लिए, की उचित चिंता को देखते हुए

अपने या अपने सदस्यों के विशेषाधिकारों को सीमित करने के लिए सदन

दूसरों की स्वतंत्रता का न्यूनतम उल्लंघन, यह है

यह देखना महत्वपूर्ण है कि उन विशेषाधिकारों में गतिविधियाँ शामिल नहीं हैं

जो किसी सदस्य के वास्तविक कार्य के भीतर नहीं हैं।

(जोर दिया गया)

इस प्रकार, गतिविधियों की पहचान के लिए निर्धारित किया गया परीक्षण

यह था कि क्या गतिविधि/कार्य सदस्य का वास्तविक या आवश्यक कार्य था। 46 235 पर सुप्रा नोट 25।

47 [1963] एसी 103।

21] 6 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

77. चैटर (ऊपर) में, यूके सुप्रीम के सामने सवाल

न्यायालय "संसद में कार्यवाही" वाक्यांश की व्याख्या थी। अभिव्यक्ति के अर्थ को स्पष्ट करते हुए, यह माना गयाः

" 47. जिस न्यायशास्त्र का मैंने उल्लेख किया है वह विरल है और इन अपीलों के तथ्यों पर सीधा असर नहीं पड़ता है। ऐसा लगता है

तथापि, यह प्रस्ताव कि मुख्य विषय किस अनुच्छेद के लिए है

उनके साथ उनके संबंध पर विचार करना आवश्यक है उस संबंध की प्रकृति और क्या, यदि इस तरह के कार्य करते हैं

विशेषाधिकार का आनंद नहीं लेते हैं, इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना है

संसद का मूल या आवश्यक कार्य।

48. यदि यह दृष्टिकोण अपनाया जाता है, तो दावा फॉर्म जमा करने के लिए भत्ते और खर्च संरक्षण के लिए योग्य नहीं हैं

विशेषाधिकार। अदालतों द्वारा दावों की जांच का कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा

संसद के मूल या आवश्यक कार्य पर समझौता, यह

विभिन्न गतिविधियों में से किसी को भी बाधित न करें जिसमें सदस्य संसद एक या दूसरे तरीके से उस भालू को शामिल करती है

संसदीय कर्तव्य। केवल एक चीज जिसे यह रोकेगा वह है

बेईमान दावे करना।

62. इस प्रकार पूर्ववर्ती, संसद और नीति के सभी विचार इस ओर इशारा करते हैं

उसी दिशा में। भत्तों के लिए दावे प्रस्तुत करना और

खर्च इसका हिस्सा नहीं है और न ही यह इसके लिए आकस्मिक है संसद का मूल या आवश्यक कार्य, जिसमें शामिल हैं -

सामूहिक विचार-विमर्श और निर्णय लेना। प्रस्तुतिकरण

संसद की; यह संसद की कार्यवाही का हिस्सा नहीं है। मैं हूँ। इस बात से संतुष्ट कि सॉन्डर्स जे और अपील न्यायालय का अधिकार था

अनुच्छेद 9 पर प्रतिवादियों की निर्भरता को अस्वीकार करें।

(जोर दिया गया)

चैटर (ऊपर) के अनुसार, इसके भीतर की गई गतिविधियाँ

सदन को दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है-आवश्यक कार्य और गैर-आवश्यक कार्य। सदन का अनिवार्य कार्य सामूहिक द स्टेट ऑफ केरला V है।

के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

विचार-विमर्श और निर्णय लेना। सदन में किसी अधिनियम को कानूनी कार्यवाही से प्रतिरक्षा प्रदान करने के लिए, यह या तो एक आवश्यक कार्य होना चाहिए या सदन के एक आवश्यक कार्य के अभ्यास को प्रभावित करना चाहिए।

78. यह अर्थ 'संसदीय' वाक्यांश को प्रदान किया गया है।

212 (1) इसमें कहा गया है कि राज्य विधानसभा में 'कार्यवाही' की वैधता पर अनियमितता के आधार पर सवाल नहीं उठाया जाएगा। प्रक्रिया। दोनों अनुच्छेद 194 (4) और 212 (1) में यह स्पष्ट है कि 'कार्यवाही' शब्द में सदन के भीतर की सभी गतिविधियों को इसके अर्थ के भीतर शामिल नहीं किया गया है। यदि प्रतिवादी-अभियुक्त के कार्य को इस आधार पर 'कार्यवाही' माना जाता है कि सार्वजनिक संपत्ति के कथित विनाश का बजट भाषण के साथ संबंध है, तो इसका मतलब यह होगा कि यदि कोई गैर-सदस्य जिसे विधानसभा के समक्ष गवाही देने के लिए बुलाया जाता है, वह भी अनुच्छेद 194 (4) द्वारा संरक्षित होगा, यदि वे प्रतिवादी-अभियुक्त के समान कार्य करते हैं। इसी तरह, अनुच्छेद 212 (1) में कार्यवाही के संदर्भ का अर्थ केवल एक विधेयक के पारित होने जैसे विशिष्ट कार्यों से हो सकता है। हालाँकि, उपरोक्त चर्चा से जो स्पष्ट है वह यह है कि 'कार्यवाही' शब्द अपने भीतर उस अर्थ को लेगा जो प्रासंगिक रूप से उपयुक्त है।

79. अनुच्छेद 194 (2) में 'कार्यवाही' शब्द के अर्थ को समझने के लिए, यह आवश्यक है कि हम प्रावधान के संदर्भ को देखें। अनुच्छेद 194 (1) में कहा गया है कि सदन के सदस्यों को स्वतंत्रता होगी -

विधानमंडल में भाषण। सदस्यों को प्रदान की जाने वाली अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता संविधान के प्रावधानों और अन्य स्थायी आदेशों के अधीन है। पी. वी. नरसिम्हा राव (ऊपर) में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि सदन के सदस्यों को प्रदान की गई अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता संविधान के अनुच्छेद 19 से पूर्ण और स्वतंत्र है, और सदन के अंदर सदस्यों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को उचित प्रावधानों द्वारा प्रतिबंधित नहीं किया जा सकता है।

संविधान के अनुच्छेद 19 (2) में दिए गए प्रतिबंध। इस प्रकार, यद्यपि सदन के सदस्यों को अपने कर्तव्यों के निर्वहन में उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के आचरण पर चर्चा करने से प्रतिबंधित किया गया है, लेकिन उन्हें संविधान के अनुच्छेद 19 (2) के उल्लंघन के आधार पर कोई चर्चा करने से रोका नहीं जा सकता है।

80. अनुच्छेद 194 (2), जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, दो अंगों में विभाजित है। अनुच्छेद 194 (2) का पहला अंग जो सदस्यों को निरपेक्ष प्रदान करता है।

सदन में कही गई किसी भी बात या दिए गए किसी भी वोट के संबंध में प्रतिरक्षा अनुच्छेद 194 (1) के तहत प्रदान की गई अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति है। अनुच्छेद 194 (2) का दूसरा अंग सदस्यों को इस संबंध में छूट देता है।

बोलने की स्वतंत्रता जो अनुच्छेद 194 (1) के तहत प्रदान की गई है। बोलने की स्वतंत्रता की इन अभिव्यक्तियों का प्रयोग-जैसा कि अनुच्छेद में प्रदान किया गया है 194 (2) - व्यक्त प्रतिरक्षा प्रदान की गई है। हालाँकि, अनुच्छेद 194 (2) के दो अंगों के बीच एकमात्र अंतर यह है कि पहला अंग स्वतंत्रता के अभ्यास की रक्षा करता है, और दूसरा अंग सदस्य को स्वतंत्रता के उक्त अभ्यास के प्रकाशन से बचाता है। स्वतंत्रता के प्रयोग के खिलाफ कानूनी कार्यवाही केवल उन लोगों द्वारा शुरू की जा सकती है जो स्वतंत्रता के प्रयोग के बारे में जानते हैं, जिसका अर्थ होगा या तो वे जो सदन में मौजूद हैं या जो भाषण, वोट या इसी तरह के प्रकाशित होने पर इसके बारे में जानते हैं। जबकि दोनों अंगों द्वारा संरक्षित स्वतंत्रताएं मूल रूप से समान हैं, दूसरा अंग इस अर्थ में स्पष्ट है कि यह 'किसी भी व्यक्ति' को सदन के अंदर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के प्रयोग के खिलाफ कार्यवाही शुरू करने से रोकता है जब वे एक प्रकाशन के माध्यम से उक्त स्वतंत्रता के प्रयोग का ज्ञान प्राप्त करते हैं। इस प्रकार, व्यायाम के लिए प्रदान की गई प्रतिरक्षा

अनुच्छेद 194 (2) के तहत दूसरे अंग में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति अनुच्छेद 194 (2) के पहले अंग में प्रदान की गई अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से अधिक नहीं हो सकती है। जैसा कि ऊपर कहा गया है, कि सार्वजनिक संपत्ति के विनाश के कार्य अनुच्छेद 194 (2) के पहले अंग के तहत विशेषाधिकार प्राप्त नहीं हैं। नतीजतन, बर्बरता के कृत्यों को अभिव्यक्ति नहीं कहा जा सकता है

भाषण की स्वतंत्रता और विधानसभा की "कार्यवाही" कहल जाए। संविधान के प्रारूपकों का इरादा यह नहीं था कि वे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की व्याख्या का विस्तार करें ताकि आपराधिक कृत्यों को विरोध के पर्दे के नीचे रखा जा सके। इसलिए, संविधान सदस्यों को केवल बोलने की स्वतंत्रता प्रदान करता है जो उनके सक्रिय होने के लिए आवश्यक है।

81. इसके अलावा, अनुच्छेद 194 (2) में 'कार्यवाही' शब्द 'कोई भी रिपोर्ट, कागज, वोट' शब्दों का अनुसरण करता है। रिपोर्ट, कागजात और वोट वे कार्य हैं जो विधानसभा के सदस्यों द्वारा अपने आधिकारिक कार्यों में किए जाते हैं। सदन में भागीदारी और विचार-विमर्श की क्षमता।

ये केरल राज्य बनाम हैं। के. अजीत और ओआरएस। [डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़, जे।]

आवश्यक कार्य जो एक सदस्य को निष्पादित करने के लिए करने होते हैं

उनके निर्वाचित प्रतिनिधि के रूप में जनता के प्रति उनका कर्तव्य। एक समाज के व्याख्यात्मक सिद्धांत के अनुप्रयोग पर, वाक्यांश 'कार्यवाही' इसके आसपास के शब्दों से रंग लेता है। चूँकि वाक्यांश 'कार्यवाही' से जुड़े शब्द उन कार्यों को संदर्भित करते हैं जो सदस्यों द्वारा अपनी आधिकारिक क्षमता में प्रयोग किए जाते हैं, अपने आधिकारिक कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए, 'कार्यवाही' शब्द का अर्थ भी केवल इस तरह के कार्यों को शामिल करने तक ही सीमित होना चाहिए। 82. तदनुसार, हम अपीलार्थी की प्रस्तुतियों को अस्वीकार करते हैं और मानते हैं कि घटना की वीडियो रिकॉर्डिंग की "कार्यवाही" नहीं थी।

विधानसभा, जो अनुच्छेद 194 (2) के तहत कानूनी कार्यवाही से संरक्षित होगी।

सी. 2 सबूत के रूप में वीडियो रिकॉर्डिंग की अस्वीकृति

वीडियो रिकॉर्डिंग। यह भी प्रस्तुत किया गया था कि वीडियो रिकॉर्डिंग में साक्ष्य की स्वीकार्यता के लिए आवश्यक प्रमाणन का अभाव है। 84. हम नहीं मानते कि यह निवेदन प्रासंगिक है और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 के तहत अभियोजन वापस लेने के लिए एक आवेदन में इस न्यायालय द्वारा विचार किए जाने के योग्य है। हमारी राय में, उच्च न्यायालय ने सही ढंग से कहा है कि साक्ष्य की अपर्याप्तता, साक्ष्य की स्वीकार्यता अनुपस्थित प्रमाणन आदि के प्रश्नों पर विचारण के चरण के दौरान निचली अदालत द्वारा निर्णय लिया जाना है। जैसा कि इस न्यायालय की संविधान पीठ ने शिवानंदन पासवान (उपरोक्त) मामले में कहा है, यह इस न्यायालय का कर्तव्य नहीं है कि वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 321 के तहत एक आवेदन में इस पर निर्णय दे।

85. ऊपर बताए गए कारणों से, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि अपीलों में कोई योग्यता नहीं है। अपीलें होंगी तदनुसार पदच्युत किया जाता है।

86. लंबित आवेदन, यदि कोई हो, का निपटारा कर दिया जाता है।

या

चिकाएं खारिज कर दी गईं।

निधि जैन